BIBLIOTHECA INDICA:

A

COLLECTION OF ORIENTAL WORKS

PUBLISHED UNDER THE SUPERINTENDENCE OF THE

ASIATIC SOCIETY OF BENGAL.

NEW SERIES

No. 183.

GOPALATAPANI

- martiner

OF THE

ATHARVA VEDA

WITH THE

COMMENTARY OF VIS'VES'VARA.

EDITED BY

HARACHANDRA VIDYA BHUSHANA AND VISVANATHA SASTRI'.

CALCUTTA:

PRINTED AT THE GANES A PRESS. 1870.

TO VINU AMAGELAS

+9515 24

श्रीगापालतापनी।

नास्याधर्वं योपनिषत्



विश्वेश्वर-पश्चित-विरचित-टीका सचिता।



य्रोलय्रीयुक्त

च्यासियाटिकसे।साइटीनामकसमाजानुमत्या

श्री इरचन्द्रविद्याभूषयोन श्रीविश्वनाथशास्त्रिया च

यथानति परिसंस्कता।

किकाताख्यमद्यानगरे

गचेशयन्त्रे मुद्रिता।

घंषत् १८२६ ।

TO VINU AMMONIJAO

CARPENTIER

विज्ञप्तिः।

इष्ट खलु सर्वजनप्रसिद्धा गर्भापनिषदाद्या खाथर्वश्रीयाः परमपुत्र-वार्थापरनामध्यनिःश्रेयसेकसाधनीभूताः नक्ष्य उपनिषदः समुपलभ्यने, तासामियं श्रीगोपालाखं परत्रसाभिधेयभूतं विशेषतोऽभियञ्चयनी विशिष्ठप्रयोजनसम्बन्धाभिधेयवती सर्व्वोपनिषद्मौलिमखनम्हामणि-रिव सार्व्वज्ञपरिपूर्शत्वानाद्युपलिश्चसातन्त्रप्रपतिहतप्रदक्षनन्तकार्था-रम्भकप्रसिमतो भगवतः श्रीगोपालस्य सरूपरूपलीलाकारख्यादिक-मग्रेषेय प्रद्योतयन्ती भवसन्तापसन्तानग्रातनी श्रीगोपालतापनी श्रुतिः गुर्जरादिदेशपरम्परासुप्रसिद्धपराग्ररगोत्रसमुद्भूतमहीदेवसम्पदायसमा-भाष्यवेवदेकदेशस्वरूपिख्यां पिष्णलादशाखायां समालोक्यते स्म। खतः पिष्णलादशाखान्तिनिष्ठतया पिष्णलादशाखीयेयमिति सर्व्वषां प्रामा-शिको खवहारः।

इयद्वावित्रान्तत्रीगोपालाख्यप्रवद्यभजनस्तनधानादिभिः समु-द्भूतापरिमिताभिषेतपरमप्रेमभाजनानामुत्तमां परमार्थञ्चानलद्यगां भित्तमात्रित्य पर्य्युपासकानां श्रद्धानानां निगूष्ठतत्त्वावकलनपराय-बानां भित्तानां प्राक्ततगुणातीतसर्व्यान्तर्यामिपरबद्घोपासनया विध्वत्त-समस्तदुष्कृतानां स्फिटिकाप्यवदितस्वक्वानि मनांसि चलौिककानन्द-सरसीषु निमळ्यन्ती, समस्तवेदार्थं सारसङ्ग्रस्भूतं दुर्व्विचेथां भित्तज-नान् ग्राह्यामास।

मिथ्योपचिश्रपाद्भू तवासनासंघातसमुद्धसितजगदारोपनिदानीभूतायक्षात्मकाविद्यातच्चिक्तसमुच्चृत्भितानर्थसार्थसमूचो मूचकलेन, चाने
श्रव्यं प्रक्षिवचवीर्यं तेजोिभः सम्पद्गः सदा खां मायां तमोरजःसत्वात्मिकां वैष्णवीं मूचप्रकृतिं वण्णीकत्य खजोऽखयो भूतानाभीश्वरो
नित्यश्रद्ददुद्दमुक्तस्वभावोऽपि देइवानेव जान इति साधारणावधार-

818674

1 2 1

माने वरीभूतस्य वस्तृतः देशतः कास्तृतस्य पिर्वेशसिदानन्दस्ररूप-श्रीकृत्वास्यपरम्याद्योऽभिवञ्जकतया चास्याः म्याविशेति समास्या सर्व्यं जनसाधारवी निरावाधित ।

खसासीकाचयमेतसां किविवातास्वमद्दानगर्स्यां परिहश्चते। खादा ययास्त्रतसम्यानुसारिकी विद्यानमानसानन्दिनी दुरवगमपङ्किरिहता सुविसारुपदीपेता प्रस्तिवरश्चीविश्वेषयप्रकीता।

दितीया तु पुनः पिकतिश्रोमिका नारायमेन रिचता। दीपिकास्वा यदीया स्वति:वासुदेवीपिनवद्गीपीचम्दनीपिनवदादासु वज्ञीसूपिनसत्सु समुद्धस्वति। स्वपरा मौसामिवंशावतंसाश्रेषश्रेमुशीसमासादितिविध-शास्त्रसिद्धान्तविषक्षयेर्जीवगौसामिमिकिरचिता।

वस्त्यामुद्रवायामेवस्याः संविद्यानं सद्यातः साधारवानाञ्जेव भवितुमदंतीति विकातास्य महानगरीस्यास्याटिक्सोसाइटीपदाभिधेयप्रधानसमाजेरासियानाममहाभूखब्धीयप्राचीनतत्त्वानुसन्दर्धद्भरेतां
मुद्रापितृपाद्यापितोऽस्मि । ततस्तापनीयसमीचीनपाठस्याविद्धीवृ वा
प्रभतं प्रयासमुदरीक्षत्य पुक्तकान्तरावि पच्च समाहत्य तत्तदीयिविभिन्नप्राय
साठपरिपाटोमवजीक्य यावानेव पाठो चधीयस्या मनीववा सस्यगवधादितक्तावानेव प्राधान्येनाच मुद्रितः, पुक्तकान्तरीयपाठप्रभेदास्तु प्रचास्वामधः सूच्यतदेरक्यमे द्राद्विताः । समाच्यपुक्तकानामेकं नवीनं परिश्वद्वायं कित्वकातास्थमहापक्तवस्यायिनः श्रीयुक्तवावुराजेन्द्रसास्वानः,
स्वतीयमपरिश्वदं सूवनं काभीधामवास्विवानुश्रीहरिखन्द्रतः प्राप्तं, चतुर्थं
मविश्वदं । नविनं तत्रत्यवानुश्रीभीतस्वप्रसादतः, पश्चमन्तु प्राचीनप्रायं
टीकाविक्वितं कित्वतातासंस्कृतपाठभाषाधापकश्चीराममयतकं रक्षात्स
मानीतं, यतेवां प्रभेदाधं क्रमेव स्व, ग, घ, छ, च, इति पश्चभिन्ववैः
पद्मानां सङ्गतः क्रतस्वेनेवाच सर्वत्र व्यवद्दिऽवग्नतथः।

गुबैक्या दिखो भूयिखगुब्य खितान् विद्वच्चनानि हानी मिदमश्यर्थे । यदत्र भान्तेरन्यया विधानं स्वचनं वा समजनि मात्रावर्षादीनां, तत्र भवनाः सक्तिनन्तदनुष्टच्चास्मास चमापयन्तु, प्रायेख दि सनः चमावन्ती भवन्ति ।

तिस्रव्यपि टीकाखाद्या प्रायेग हि तापनीययावतीयार्षप्रखापकतया प्राधान्येन मुदिता। रतस्यां यच यच तापनीयपदस्य खास्यानं नौ दर्रं तच नारायग्रमीता जीवगौसामिस्रता वा खास्या तच्हीकात उदृत्य पचामामधौ विन्यस्ता। यच च एथक् खास्थानं परिदर्शं तच उभगौ-रपि खास्थानं सङ्गस्य सस्पाद्यरेरिङ्गतं।

विश्वेश्वरप्रसीतटीकायां समाप्तिसूचकं भवसन्तापसन्तानशातनी-त्यादिकमेकं पदं विद्यते ! सर्वेषु पृक्तकेषु तदीयस्वतुर्थपाद: जनाईन-विनिर्म्मितेति स्रनन्तरं श्रीमिदिश्वेश्वरविरिचतायां गौपासतापनीटीका-यामिति वर्त्तते।

चन तु सन्देशः किमियं विश्वेश्वरप्रक्षीता जमादनंप्रस्वीता वेति।
यदि केषुचिदेशान्तरीयपुत्तकेषु विश्वेश्वरविनिर्मितेति पाठौ विद्येत उत वा विश्वेश्वरस्य जनादंनेत्यपरं नामधेयं सूप्रसिद्धमुपत्तस्य समा-धानं रमसीयतरमिति सुधीमिविवेधनीयमित्यसमप्रस्ततानस्य जस्य नेन इति।

गोपालतापन्याः । सूचिपत्रं ।

| विषय: । | एखाङ्गाः । | पत्रयञ्जाः |
|--|-------------|------------|
| च धिकारि निरू पमं । | ২ | १३ |
| खष्टद्सपद्मस्य रूपकौतिः। | ય્્ | € |
| चातपत्रमन्दार्थस्य रूपककयनं। | ४७ | ২ |
| चावरमपूजाविधानं। | १५ | १ |
| खाराधनाधिष्ठानपीठनिरूपर्या । | १ ३ | ২ |
| उत्तरसने मन्त्रसंवादकथनं। | १० | १ |
| चोक्चारपुटितपच्चपदमन्त्रजपपानं 🕽 | १ट | ২ |
| कग्रुमाचाभ्रब्दार्थविवर्गा । | પૂર | ∵ ₹ |
| किरीटग्रव्दार्थयाखानं । | ્રમૂદ | · ¥ |
| कुग्छनभ्रव्दार्थक्यनं । | યૂદ | € |
| कौत्तुभग्रव्दार्थक्यनं। | भूद | १ |
| गदादीनां विदादिरूपेगौपासनकथनं । | યુદ | ٧. |
| गयोश्वरादिनिङ्काविखातिनिरूपयां। | . ४३ | 9 |
| गान्धर्वौ प्रति दुर्वासस उक्तिः। | ĘC | |
| गोविन्दम्ब्दार्थप्रस्रः । | 8 | ٠ ۶ |
| गौपीजनवस्तभविषयक् प्रश्नः । | 8 | ₹. |
| ग्रन्थप्रयोजनकथनं । | ২ | १५ |
| ग्रन्थविषयप्रतिपादनं। | · ર | . १8 |
| गोविन्दप्रब्दार्थनिरूपगं । | ₹9 | ९ |
| गोपालमन्त्रीचारगपः । | ع . | ₹ |
| गोपीनां दुवाससः समीपगमनं। | ₹∘ | પ્ |
| गौपीनां खदेशगमनाय दुवीससञ्जाजाप्रदानं। |) ₹९ | 2 |

11 2 N

| गौपासस्य मधुरायां नित्याधिष्ठानकचनं। | 82 | 8 |
|---|------------|----------|
| चन्द्रध्वजदशन्तेन चोङ्गार्षुटितपश्चपदमन्त्राव्यक्तिपत्त | | |
| क्यमं। | २२ | 8 |
| बतुर्थू द्वार्चमं। | ५० | 8 |
| चतुर्भु जधारिश्रीकृषास्य धानं। | પૂધ્ | १ |
| चतुर्भु जग्रव्हार्थक्यनं। | थूष | ₹ |
| जीवस्य भाक्तुत्वस्यवस्थापनं। | ₹५ | २ |
| दिखधनप्रद्रार्थस्य रूपनीति:। | પૂછ | १ |
| दुवाससे भन्नप्रदानं। | ₹१ | १ |
| दुर्वाससी ग्रीमीनाच परस्परसंवाद: | ₹ २ | ₹ |
| दुर्वाससं प्रति राधिकायाः पुत्रः । | ३२ | ₹ |
| दुवे।ससी राधिकां प्रति गुनविताः। | ३८ | ધ્ |
| दारममूर्त्तीनां प्रत्येकोपासकनामकथनं। | 88 | 8 |
| बादशीमूर्त्या खाराधनपत्तं। | 84 | 8 |
| हिभुजस्य ध्येयसक्यनं । | પ્ર€ | ર |
| भ्रायस्हरपप्रश्नः। | • | १ |
| परमदेवादिविषयकः सनकादिप्रश्नः। | R | 8 |
| पच्चपदात्मकश्रीकृषाभजनपर्वं। | 20 | ঽ |
| पश्चपदमन्त्रस्य दशाचारादिमन्त्रवीजल कथतं। | १८ | ¥ |
| प्रस्पदमन्त्रस्ट्पप्रमः। | ₹• | ₹ |
| पञ्चपदमन्त्रसङ्घक्यनं। | ₹• | 8 |
| पत्रपदमन्त्राङ्क्तभौतिकादिसृष्टिनिरूप्रयाः। | ₹₹ | ₹ |
| परमात्म सरूपकथनं । | ₹ ₹ | २ |
| पद्मपदात्मक ज्रीकृष्ण्यमन्त्रज्ञपम् सं । | રું છ | \$ |
| पीठपूजाविधानं। | ŧ٧ | ₹ |

n z d

| • ~ · | | |
|---|---------------|----|
| प्रोक्तार्थे मन्त्रसंवादः। | २8 | ₹ |
| भ्रोक्तमन्त्रजये श्रुतिसंवादः। | ২৩ | € |
| प्रागादिस्तुति:। | €₹ | ₹ |
| प्रतिमादी श्रीकृष्णाचंनपाचं। | 8೭ | 8 |
| ब्रह्मायं प्रति श्रीक्षयास्रोत्तरं। | 8• | ? |
| भजनप्रकः । | • | * |
| भजन प्रश्रात्तरं। | १ १ | * |
| मङ्गलाचरग्रं | Q | १ |
| मन्त्रान्तरेग पञ्चपदेश्वौ जगत्सृष्टिकयनं। | ২ ₹ | 8 |
| मथुरायाः श्रेष्ठत्वयवस्थापनं। | 80 | ঽ |
| मृशुरायाः श्रेष्ठत्वे मन्त्रसंवादः। | 8∉ | ₹ |
| मथुरायां गोदालभजनस्य पालीत्वर्धकथनं। | x 4 | ? |
| मृथुराग्रब्दार्थविवरगं। | ¥Ę | ₹ |
| रसनविषयकप्रश्नः। | € | १ |
| रसनप्रश्लासरं। | १० | • |
| राधिकायाः पुनः प्रश्नः। | ३८ | 8 |
| रौद्रपादिबादशमूत्तीनामवस्थानकथनं। | 88 | ₹ |
| बदादिक चुंक यूजनमन्ताः। | € ૭ | 8 |
| बासुदेवस्तोत्रकथनं। | २५ | ¥ |
| र इंडनारिसादश्वन निरूपर्यं। | ४१ | १ |
| रहदनादिषु चादिलादिदेवानामवस्थानकयनं। | 8२ | ₹ |
| यूचावतारकथनं। | પ્ર રૂ | ₹ |
| श्री स्वध्यविषयन प्रश्नः। | 8 | १ |
| श्रीकृष्णधानादिपसम्पनं। | ય | र |
| श्रीष्ठवाधान निरूचगं। | 9 | શ્ |
| | | |

8 1

| श्रीत्रणसाराधालवयमं। | ११ | * |
|--|------------|---------------|
| श्रीकृषास्य जगतासन्तमसम्यनं। | 99 | 8 |
| श्रीकृषास्य जगदुत्यादकत्वकथनं। | १२ | १ |
| श्रोक्तवास्य गोपाचिवद्यामयलिकितः। | १२ | ₹ |
| श्रीक्रम्मोपासन प्रश्नः। | ₹ ₹ | १ |
| श्रीकृषास्य मौचपुदलयवस्थापनं। | १८ | 8 |
| श्रीक्षणाद्रस्राणः पञ्चपदमन्त्रपाप्तिः। | २ १ | १ |
| श्रीक्तवागीपीसंवादः। | ર હ | १ |
| श्रीक्षणसारगमाचात्म्यक्यनं। | ३० | ٠ ২ |
| त्रीगोपालस्य सर्वभूतान्तर्यामितस्यवस्थापनं । | ₹₹ | 8 |
| श्रीक्षणसाभौतृत्वपृतिपादनं। | २५ | १ |
| त्रीक्षण्य साचिष्टपक्षणनं। | ₹¥ | 2 |
| श्रीकृषास्याविद्यारिइतत्वक्यमं। | ₹€ | १ |
| श्रीकृषास्य षड्विधविकारश्र्चलकथनं। | ₹¥ | y |
| श्रीकृषा सरूपक्यनं। | २८ | Ę |
| श्रीकृषावितारश्रेष्ठलपुत्रः। | ₹೭ | ¥ |
| श्रीकृष्णभक्तानां मधुरावस्थानीकिः। | ¥ 6 | ₹ |
| श्रीकृषात्रसागीः पुश्रीन्तरे। | પ્રર | १ |
| श्रीवत्यनाञ्चनग्रब्दार्थंकथनं । | ५७ | ₹ |
| श्रीकृषास्य सगुणनिर्गुणोभयात्मकलक्यनं । | Ęo | ٠ و |
| श्रीकृष्णावतारागामाभरगादिपुत्रः। | € १ | १ |
| श्रीक्रमां पुति ब्रह्मोितः। | ६१ | ¥ |
| श्रीगोपाचन्तुतिः। | ĘŲ | . 8 |
| सनकादीन्पृति ब्रह्मण उत्तरं। | ₹ | • |
| खाहाविषयं कपुत्रः। | 8 | ২ |

श्रोगोपाचतापन्याः

शुद्धिपत्रम् ।

| घष्ठाञ्चाः । | प रत्यक्ष ः। | चग्रदं। | श्चर् । |
|--------------|---------------------|-----------------------|-----------------------|
| ર | १ | मचुः कः परमो | मूचुः कः परमो |
| २ | - | विभेति | बिभेति 💮 |
| ર | Ę | बुद्धः | बुद्धः |
| ર | १० | | व्रातं |
| ₹ | २ | मृत्युर्विभे ति | मृत्युविभेति |
| ₹ | | विभेति | बिभे ति |
| ₹ | | विभेति | विभेति |
| 8 | १६ | विभेति ं | बिभे ति |
| Ę | १८ | पद्धकपाठ: | युक्तकपाठ: |
| 9 | १७ | गौपीगौपगवावीत- | गोपीगोपगवावीत- |
| | | मिति। कै स्थित् | मिति के चित् |
| १२ | Ę | मकरीत् | मकरौत् |
| १२ | २१ | भगवद्गीर्यं | भगवद्दीय्यं |
| १२ | २ १ | कतीऽर्घः | क्रतोऽर्थः |
| १५ | ٤ | मग्डुका दि | मण्डूकादि |
| १५ | | मच | मूच |
| १ ६ | २ | ने ऋंत्यवायचे | नै ऋंत्यवायये |
| ₹ | | युक्तवर्षा य | युक्तवर्या ये |
| १८ | २० | चसवात् चसेवनात | च्यसेवात् च्यसेवनात् |
| २ १ | १५ | प्रकटो कु र्वन | प्र कटीकुर्वन् |

॥ २ ॥

| २१ | २१ | इति भ्रयः | रति भेष: |
|-----|------------|-----------------------|-----------------------|
| २१ | २२ | टीकयां | टीकायां |
| २२ | ২ | स्त्रो पुस ादि | स्त्रीपुंसादि |
| २२ | 8 | मात्मनं | मात्मानं |
| २२ | ₹ \$ | समास्य यः | समायधं |
| २२ | 39 | पदात | पदात् |
| २२ | ર ર | खचापदं | खा चापरं |
| र३ | ११ | चर्छिति | चके इति |
| ₹₹ | १७ | च्यपतत् | ञ्रापतत् |
| २8 | १७ | विसुद्धादिगुगाकं | विश्रद्धत्वादिगुगार्क |
| | | पदमेव। वासुदेव: | पदमेव वासुदेवः |
| २५ | ર | त्तत्या . | प ुत्या |
| २५ | 3 | कमलापतय | कम चापतये |
| २७ | १ | जगद्गरी | जगद्गुरी |
| २७ | 8 | स्तरिभ | न्तुतिभि |
| २७ | 4 | पर्व | पूर्व |
| रू | १८ | च्र खादयेदिति | च्या खादयेदिति |
| ₹∘ | ₹ | च्यत्रतीत्रती | च्यवती वृती |
| ₹२ | 9 | ग्रब्दवानाकाग्रः ॥ ११ | ॥ भ्रद्धवानाकाभः |
| ३२ | १८ | भ्रःव्यानिति॥ १२॥ | |
| ₹₹ | <u>~</u> | भूभि | भूमि |
| ₹₹ | १ ६ | | सञ्चा |
| ३५ | . 88 | सुपर्या | सुपर्णे। |
| 8 0 | २० | भतानां | भूता नां |
| ४१ | २१ | अर्गा दिलात् | चर्णाचा दिलात् |

11 3 11

| 88 | ٤ | प्रयमाखा | प्रसुन्नाखा |
|----------------|-----|--------------------------------|------------------------------|
| 88 | १३ | मूमिखा | भूमिष्ठा |
| 88 | १ ६ | चतुर्थी | चतुर्थीं. |
| 88 | १८ | प्रत्यचासौ | प्रत्यचा चासी |
| 8 € | २० | अवता गां | अवतारा गां |
| 8€ | २१ | प्रगावार्थलमाच | प्रगावार्थमा इ |
| 8 € | २३ | च्यांकारस्यांगै: कत इ | ते च्याङ्कारस्यांशकै: इत इति |
| | | टीकासमातः पाठः | बचिक्रितपुक्तकपाठो |
| | | | विश्वेश्वरसमातः |
| ४८ | १ | | मबाधितं । |
| ४८ | ¥ | स्तवे | स्तु व |
| 82 | ११ | धात्वर् <u>या</u> न्तग्रद्रस्य | धालधानग्रदस्य |
| 8८ | १३ | मवाधितं | मगिधितं |
| 8द्र | १७ | मायामा | मायाया |
| 38 | ₹ | यस्त जम्बु | यस्तु जब्बू |
| 38 | १८ | सपत | सप्त |
| 38 | 39 | वीदय | बौद्ध |
| ५० | १० | जम्बुदीपे | जम्बूदीपे |
| ५० | १३ | चतुर्ब्य इ | चतुर्थू ह |
| ५० | २२ | स्ते नति | क्तेने ति |
| ሂየ | २१ | हीनाः य किन्तु | इतीनाः ये किन्तु |
| ध्र | | वे इङ्गार | वै इद्वार |
| પ્રર | २२ | मचतो वे इति | महतो वै अहङ्गार इति |
| પૂ 8 | १ | मात्रात्मको संबा | मात्राता कः कथा |
| ¥8 | 3 | तदात्मान: | तदाताकः |

1 8 1

| X 8 | २२ | मथरायां | मथुरायां |
|---------------|-----|-----------------------|---------------------------|
| ય્યૂ | 9 | की रीटं | किरोट |
| પ્રપ્ | १ ३ | चिन् इतं | चिक्रितं |
| ય્ય | १८ | वचननं | वचनं |
| પ્ર ફે | Ę | संसारार्यवं | संसारार्या व |
| પ્ર€ | १४ | सम्यक् ज्ञानं जगद्धमं | सम्यक् ज्ञातं सद् जगद्धमं |
| પ્ર ફ | १८ | संसारार्यवं सञ्जातं | संसारार्थवसञ्चातम् |
| <i>પૂ૭</i> | १५ | सर्यत्रास्वरी | सूर्यंगस्बरी |
| y o | २र | निर्मि त | निर्मित |
| € • | २० | सगुरांमेक | सगुग्रमेक |
| € 0 | २१ | सगुव | सगुगं |
| €२ | र | गान्धर्वा | गान्धर्वी |
| ક્ પ્ | 9 | भूभुवः | भूभू वः |
| ક્ પ્ર | १७ | ब क्तस्म | ब क्त्ये |
| €€ | પ્ર | समानात्मन | समानाताने |
| € € | | भूभुवः खत्तसा | भूभ्वः खत्तस्रो |
| € € | १० | तस्मैव | तस्मे वै |
| € € | १७ | खप्त | खप्र |
| € € | २७ | भतात्मा | भूतात्मा |
| € ૭ | २२ | ख प्त | खप्र |
| € ೨ | २३ | पठनीम् | पठ नीयम् |
| €¤ | પ્ | क चृत्वं | कर्त्यु लं |
| <u> </u> | २₹ | पाट: | पाठ: |

गोपासतापनी।

पूर्वभागः।

-sostere

श्रीगराभायनमः।

(१) त्रों सिचदानन्दरूपाय क्रष्णायाक्रिष्टकारिणे । नमो वेदान्तवेद्याय गुरवे बुद्धिसाचिणे॥१॥

परमकार शिकतया सगुगोपासनक मे शाधिकारि जनानामनर्थ-निरु त्तं (१)सि चिदानन्द खरूपश्रीक शाक्ष्माकातावासये च श्री गोपाल विद्यामुद्दी-पयन्ती तापनी श्रुतिः श्रोतृ गाम विद्वविद्यासि द्वे सदाचाराव वे धनाय विषयसी जन्म प्रकाश नेन तत् प्ररुत्ति सिद्धये च प्रतिपाद्य परमदेवत प्रणाति-ज्ञचा गंम क्षणं प्रकाश यित, सिच्दानन्द रूपायेति। 'क्ष्म व्याय,' 'नमः,' इति सम्बन्धः। क्षषण ब्दः सिच्दाचकः, नश्र ब्द्यानन्द वाचकः, इत्य भिष्रेत्य क्षण श्र ब्दार्थमाह, सिद्दित। 'सिच्दानन्दः,' एव खरूपं यस्य, सः तस्ते (१) कोश कर्षक त्वं क्षण श्र व्यायका श्री सिक्टित। 'अक्षिस्य म्' अविद्या ऽस्मिता-रागदेषा भिनिवेश ज्ञास श्री स्वर्य स्वर्ते हतं, भक्ष जनं करोति तच्छी ज्ञाय (४)।

१ श्रों तन क्रयणः कस्मात्। किषभू वाचकः मञ्दो नस्य निर्वतिवाचकः। तथो-रैकां परं त्रश्च क्रयण इत्यिभिषीयते। इति घ, ङ, चिक्नितपुस्तक इयस्य प्रारम्भे पाटः। श्वस्य, कृष्यते विश्विद्यते इति कृट् भूमिः सर्व्याधारः, निर्वतिरानन्दः सुस्तं, तथो रैकां सामानाधिकरण्यं, तत्र यदा कम्मेधारथेण भवित तदा परं त्रस्त कृष्ण इति मञ्देनाभि-धीयते। श्वयवा भूपदणं दृश्योपज्ञचणं, निर्वतिः सुख बरूपं त्रश्चा, तथो रैकाम् श्रध्यासनिष्टत्या मुद्धात्मतापादनमिति व्याश्चा नारायणेन क्रता। विश्वेश्वरेण तु नैष पाठो धतः।

२ जनानर्थनिवृत्तय इति ग, ङ, चिक्रितपुस्तबद्वयपाठः ।

१ सिंदानन्दं यदु ब्रह्म तदेव खरूपं यस्य तसी। यदा सनी सर्वकालदेशसत्ताकी सर्व्यात्रक्षष्टी यी ज्ञानानन्दी तावेव खरूपं खाकारी यस्य तसी दित जीवगेखासिकतोर्थः।

४ चिक्तिष्टं यथा स्थात्तथा गाविङ्गभारककेशियभादिलीलां कर्त्तुं शीलं यस्य तसी इति जीवगोस्वामिक्तवोर्थः।

त्रों मुनयो ह वै ब्रह्माणमत्तुः, कः परमा देवः, कुता मृत्युः(१) विभेति, कस्य दिज्ञानेन ऋखिलं दिज्ञानं भाति,(१)कोनेदं विश्वं

तत्सद्भावे प्रमाणमाह। 'वेदान्तवेद्याय' सद्यावाद्या प्रकाश्याय इत्यर्थः।
"तं त्वीपनिषदं पुष्कं पृष्क्यामि" "वेदेख सर्वेर् हमेव वेदाः "इति
श्रुतेः, स्मृतेख। नमस्यतीपयिकं रूपमाह, विशेषणद्येन। 'गुरवे'
सर्वहितापदेष्ट्रे, 'वुद्धः' सर्वेन्त्रियपाणमने धियां, 'सान्त्रियो'। स्तेन
ज्ञानदाद्यतेन प्राधान्यं सूचितम्। वेदान्तवेद्याय, इति विषयः सूचितः।
उपनिषक्त्रव्याच्यत्यदिप तापन्या विषयप्रयोजनादिकं सूचितम्।
तया हि ये इमां ग्रोपाचविद्यामुपयान्ति मुमुच्चवक्तेषामियं ग्रोपाचविद्या
गर्भजन्मजरारेगाद्यन्थं न्नातं श्रातयित, तथा क्रक्षाख्यं संसारविनिवर्त्तकं
परं ब्रह्म गमयित। संसारहेलविद्यादिकंच ख्यान्तमवसादयित विनाधयतीति व्यत्यत्या ग्रोपाचविद्या उपनिषद्चते। तदेतुलाच यन्थे।ऽपि
उपनिषदित्युच्यते। "खायुर्वेष्ट्रतम्" इत्यादिवत्। खत्र मुमुद्धरिधकारी। क्रक्षाख्यं संसारविनिवर्त्तकं सिचदानन्दखरूपं विषयः।
खात्यन्तिको संसारिनिवर्त्तः क्रक्षाखरूपावाप्तिस्व प्रयोजनम्॥१॥

यन्यप्रयोजनादीनाञ्च साध्यसाधनभावः सम्बन्ध इत्यभिष्रेत्य ग्रोपा-स्विद्यास्तृत्यर्थमाख्याथिकामारचयित, मुनया इ वे ब्रह्माणमिति। इ वे इत्यथ्ययम्। 'इ वे 'सार्थप्रते। 'मुनयः' तत्त्वमननश्रीसाः सनकादयः, 'ब्रह्माणं,' प्रति 'ऊचुः'। किम्। 'कः,' 'परमः' सर्वेत्कृष्टः,

१ कस्मान्मृत्युरिति घ, चिक्रितपुसकपाठः ।

२ अखिलं विज्ञातं भवति इति ख, घ, चिक्रितपुखकद्वयपाठः ।

संसरित, इति ॥२॥ तदु होवाच ब्राह्मणः, श्रीक्टष्णे वे परमं देवतम् ॥ ३॥ गोविन्दान्मृत्युर्विभेति ॥ ४॥ गोपीजन-वक्तभज्ञानेन तज् ज्ञातं (१) भवति ॥ ५॥

'रेवः'। 'कुतः' कस्मात्, च 'मृत्युः,' 'विभेति' चस्यति । 'कस्य,' 'विज्ञानेन,' 'चित्रक्षं'(^२) सक्षं जगत्, 'भाति'। 'केनेरं विश्वं,' 'संसरति' प्रसरति उत्पद्यते॥ २॥

तद् हेति। 'तत्' तत्र प्रश्नेषु, 'ब्राह्मणः' कान्दसत्तात् ब्रह्मा, (३) 'उ' खपि, तान् प्रति 'ह' किल, गोपालविद्ययेवीत्तरम् 'उवाच'। किम्। 'श्रीक्रणः,' 'वै' प्रसिद्धं, 'प्रमं दैवतं'। क्षष्यव्दः सत्तावाचकः, नकारख खानन्दवाचकः, तथाच, सदानन्दः प्रमं दैवतिमित्यर्थः। यहा भक्तपापकर्षणात् कृष्णः प्रमं दैवतिमित्यर्थः॥ ३॥

गोविन्दादिति। गवा ज्ञानेन वेदा उपलयः 'गोविन्दः,' तस्मात् उपलयात्, चमृतखरूपावाप्ते। 'मृत्युः,' 'विभेति' भयेन तदाज्ञा-कारी भवति इत्यर्थः(॥)। "भीषाऽस्मादातः पवते भीषादेति सूर्यतः" इत्यादिशुतेः॥॥॥

गोपीजनेति। इदं सक्तजगत् नामरूपाभ्यां गोपायित रच्चति, ष्यथवा परं पुमांसं परत्रसाखरूपं गोपायित संद्येणतिति व्युत्पच्या गोपी प्रकृतिर्माया, तस्याः सकाप्राज्ञातः प्रपञ्चः, 'गोपीजनः,' तस्य 'वस्नभः' स्वामी इन्यरः उत्पादनपालनसंस्रणधानम्, इत्यधिष्ठानलात् तदिज्ञा-

१ गापीजनवसभन्नानेनेदं विज्ञातम् इति ख, चिक्रितपुस्रकपाटः।

२ पिक्सं प्राक्तताप्राकृतं सर्वः वसु । इति जीवगासामिप्रणीतोऽर्थः ।

२ ब्राह्मण इति प्रत्यगाताना चरेरपत्य ब्राह्मणः खयभूरिति नारायणप्रणीताऽर्थः।

ध गोविन्दरूपेण स गोचारकः बाब्रात् गा इव स्रत्योजीवानपि रचतीत्यर्थः । इति जीवगोस्वामिप्रणीतोऽर्थः ।

खाइयेदं संसरतीति॥ ६॥ तदु होचुः, कः क्रष्णे, गोवि-न्दस्य कोऽसाविति(१) गोपोजनवन्तभः कः, का खाहेति॥०॥ तानुवाच ब्राह्मणः, पापकर्षणे।,गोध्रमिवेदविदितो विदिता,(१)

नेन 'तत्' च्यखिचं विश्वं, विज्ञातं 'भवति'। "यथा एकेन मृत्पिछेन च्यखिचं मृत्रमयं विज्ञातं भवति" इतिश्रुतिस्मृतीतिज्ञासचीकेषु प्रसिद्धेः॥५॥

खाइयेति। सुषु चाइ चाइतिक्रिया यया सा 'खाइा'हतिथुत्मचा खाइाम्बद्दवाच्यम मायया, 'हदं' जीवजातं, 'संसर्ति' संसारवङ्गवति, हत्यर्थः ॥ ६ ॥

रवं गूज़ियें ब्रह्मका उक्ते तदर्यजिद्यासवा मुनयः 'तत्' तत्र, 'उ र पूर्वं, 'जचुः,' इत्यार, नः क्रमा इति ॥ ७ ॥

प्रामुक्ताचे ब्रह्मा प्राष्ट्र इत्याह, तानुवाच ब्राह्मण इति। 'ब्राह्मणः' ब्रह्मा, 'तान्' सनकादीन्, प्रति 'उवाच'। क्रव्याखरूपमाह, प्रापिति। प्रापक्षंकलात् प्रामुक्तिरीत्या च सिंदानन्दरूपलात् पापक्षंकसिंदानन्दरूपलात् पापक्षंकसिंदानन्दरूपलात् पापक्षंकसिंदानन्दरूपलात् पापक्षंकसिंदानन्दरूपलात् पापक्षंकसिंदानन्दरूपलात् प्रापक्षंकसिंदानेवदिविदित इति। ग्रावि भूमा ग्राप्यव्दवाच्यात् वेदात् 'विदितः,' 'विदिता' वेत्ता द्रष्टा ग्राविन्दः, खतन्तस्मादिधिष्ठानतया ज्ञाला मृत्युः वि-

१ गोविन्द्य कोसी इति घ, चिक्रितपुसकपाठः।

२ वेदिता इति घ, चिक्रितपुखकपाठः।

३ पापं चित्तमपि खीथजीज्यां कर्षति पापपुरवान् पूतनावकेक्यादीन् असुरानिप स्वत्तान् मुक्तिदानार्थमाकर्षतीति स एव परमकृपाज्यः परमद्दैवतिमिति भावः इति जीव कार्सामकृतीर्थः।

गोपीजनाऽविद्याकलाप्रेरक, स्तन्माया चेति॥ ८॥ सकलं परं ब्रह्मीव तत्॥ ८॥ यो ध्यायति, रसयति,(१) भजति, सोऽन्टतो भवति सोऽन्टतो भवतीति॥ १०॥

भेति इत्यर्थः। ग्रीपीजनवस्त्रभस्यस्पमाइ, ग्रीपीजनेति। ग्रीपायनीति ग्रीप्यः पासनग्रस्तयः तासां 'जनः' समूद्यः, तदाच्या 'स्विद्याकलाः,' च तासां वस्त्रभः सामी 'प्रेरकः' ईश्वरः, इति खुत्पत्त्या ग्रीपीजनवस्त्रभ-स्थेश्वरस्य सर्वाधिष्ठानस्य, ज्ञानेन सर्वमारोपित्वेन विदितं भवति इत्यर्थः(१)। खाद्यासरूपमाइ, तन्मायेति। प्रागुस्तरीत्या तस्य ईश्वरस्य स्थीना 'माया' खाद्या, तथा सर्वं संसर्गि इत्यर्थः॥ 🗢॥

सक्तमन्त्रस्य प्राचितार्थमाच्च, सक्तनिति। क्राचया मायया, सच्तितं 'सक्तं' परमेश्वराख्यं, 'परं ब्रह्मीव,' 'तत्' उत्त मन्त्रप्रतिपाद्यम्॥८॥

रतज्ञानादेः फालमाइ, या ध्यायतीति । 'यः'यः,तद्रूपं 'ध्यायति,' तथा 'रसयति' कामवीजेन पश्चपदीं जपति, 'भजति' पूजयति, 'सः अमृते। भवति' मरणात् विवर्जिता भवति, इत्यर्थः ॥ १०॥

१ रतयोध्यायति रसति इति ख, चिक्रितपुस्तकपाठः।

२ गोपीजनस्य या चिविद्याकसा चिविद्यावयवासामां प्रेरकः निवर्त्तकः गोपीजनवस्तमः कामनायविद्यानिवर्त्तनेन स्वात्मभावप्रद इत्यर्थः। यद्दा गोपीजन एवासमन्तात् विद्याकसा ज्ञानप्रदे ग्रन्थभागः गोष्यः गाव ऋच इतित्रुतेः तासां प्रेरकः स्रोत्मुखतासम्यादकः। इति नारायसप्रस्तितिऽर्थः।

ते चोचुः, किं तद्रूपं, किं रसनं, कयं चाचे तङ्गजनं,(१) तत् सळें विविदिषतामाख्याचीति ॥ ११ ॥ तदु चेवाच चैरप्धेा, गोपवेशमञ्कामं तरुणं कल्पद्रुमाश्रितम् ॥ १२ ॥ तदिच स्रोका भवन्ति ।

धोयं एकक्ति, तथा रसनादिकच एकक्ति, ते हो चुरि-त्यादिना॥११॥

तत्र धेयरूपनिरूपणमवतारयित, तदु होवाचिति। 'तत्' तत्र प्रत्रेष्ठु, 'हैरणः' हिरण्यार्भस्यापत्यं हैरणः ब्रह्मा, धेयं रूपम् 'उवाच,' हत्यर्णः। गोपविष्मिति। गोपायतीति गोपत्तस्य वेष्मा यस्य तं 'गोपवेषं' पालक-खरूपम् खेपा विभक्तिं हत्यव्धः समुद्रः तहदाभा यस्य तम् 'खन्धामं' समुद्रवद्गम्भीरम्, खपारमित्यर्णः। 'तर्षां' जरादिदेषरितं। 'कस्पद्रमः' वेदः, सर्वपुरुषार्थहेतुलात् तम् खास्त्रितं तत्प्रतिपाद्यम्। हति तेनेव वा सर्वेषपासनात्र मंप्रतिपादकेन तत्तत्त्व मंप्रतिपाद्यम्। हति तेनेव वा सर्वेषपासनात्र मंप्रतिपादकेन तत्तत्त्व मंप्रतिपाद्यम्। इति तेनेव वा सर्वेषपासनात्र मंप्रतिपादकेन तत्तत्त्व मंप्रतिपाद्यम्। 'द्रश्वरायत्तं प्रतमत उपपत्तः'' हति स्थायात्, ''स्रते च ततः कामान्यवेव विहितान् हितान्'' हतिस्रृतेस्व। यदा 'गोपः' धेनुपालकः, तस्य 'वेषः,'यस्य तम्। 'खन्धामं' सजलजलदनीलं। 'तर्षां' नवये।वनं। कत्त्वस्व चिहासनस्थाऽस्वृजोपविष्यमित्यर्थः॥ १२॥

१ कथं वा आहे। इति घ, चिक्रितपसकपाढः।

सत्पुण्डरीकनयनं मेघाभं वैद्युताम्वरं। दिभुजं ज्ञानमुद्राढ्यं वनमालिनमीश्वरं॥१॥ गोपगोपीगवावीतं(१) सुरहुमतलाश्चितं।

उत्तरूपधानं मन्त्रसम्मित्याजेन सविक्तरमाद्द्र, तदिहेति। 'तत्' तम, 'इह' उत्तरूपधाने, 'श्लोकाः' मन्त्राः, खिप 'भवन्ति'। सत्पाढ-रीकनयनमिति। 'सत्'निर्मालं, 'पुष्डरीकं' हृत्क्रमणं, 'नयनं' प्रापकं यस्य तं। 'मेघा' उपतप्तमनिस सिह्दानन्दल्लपा, 'खाभा', यस्य तं। विश्वेष द्योततइति विद्युत्, विद्युदेव 'वेद्युतम्' तादृश्म् 'अम्बरं' खप्रकाश-चिदाकाशमित्यर्थः। हैं। हिरस्थार्भविराडात्माना, भुजा माक्तिक-शिल्पहेतुभूता हस्ता, यस्य तं 'दिभुजं'। ज्ञानमुद्रा तत् त्वमसीति सिह्दा-नन्देक्तरसाकारा दृत्तिः, तत्र 'खाखं' प्रकाशमानं(१)। वने विविक्तप्रदेशे खभक्तेषु मास्तते प्रकाशते इति तं 'वनमास्तिनम्'। 'ईश्वरं'ब्रह्मादी-नामिष नियन्तारम्॥ १॥

चात्मानं गोपायतीति, 'गोपः' जीवः, 'गोपी' माया, 'गावः' वेदाच, तेः 'द्यावीतं' खामितया चान्नितं। 'सुरमुमः' वेदः, तस्य 'तत्तं' खरूपम्, 'चान्नितं' तत्प्रतिपाद्यम्, इत्यर्थः। 'दिचान्तक्रयोः'

१ गोपीगोपगवावीतिमिति। कैसित् पयते तनास्यर्षितवात् गोपीपदस्य पूर्व-निपातः। गोपा हि प्रायेण कीनेवा भवन्ति। इति नारायणटीकाधृतपाटः। २ तर्ज्ञन्यङ्गुष्ठकी सक्तावयता इदि विन्यसेत्। वासच्छाम्बुजं माजान पूर्व नि विन्यसेत्। ज्ञानमुद्रा भवेदेषा रामचन्द्रस्य प्रेयसी। प्रेयसीत्यातिष्रायिकनिर्देशाद्न्येषासवताराणां प्रिये ति गम्यते। सीनमुद्राद्यमिति तु युक्तः पाटः। सीनवतैव पूतनादिकंसानानां निपातितलात् खरूपस्य च सोकेऽप्रकाशनाच गोपीजनेषु गुप्तभावेन स्थितं ब्रह्मेत्यर्थः। इति नारायणप्रणीतोऽर्थः।

दिव्यानद्गरणोपेतं रत्नपङ्गजमध्यगं ॥ २ ॥ कानिन्दीजनक्जोनसङ्गिमास्तसेवितं । चिन्तयंश्वेतसा कृष्णं मुक्तो भवति संस्तेरिति॥३॥

घड्विधैश्वर्थेनः, 'उपेतम्'। तथा 'रत्न'तुस्यम् स्रतिसक्तं 'पङ्कजं' हृदयकमनं, तदन्तःस्थाकाश्चगतः,तम्। "रेश्वर्थेनस्य समग्रस्य भ्रमंस्य यश्रसः श्रियः। वैराग्यस्य च माच्चस्य मसां भग इतीङ्गनाः इति। तेच ष्रड्धर्मायस्य सन्तीति भगवान्॥ 'कालिन्दी' नाम निर्मानीपासना, तस्याः 'जनकञ्जीनाः' नानास्पुरणतरङ्गाः, तत् 'सङ्गी,' 'मारुतः' निश्चलप्राणवायुश्च, ताथ्यां 'सेवितम्' खाराधितम्। यदा भक्तानुग्रचार्थमाविष्कृतचिद्वनस्य यथात्रुतमेवेदंधानं। 'सत्-पुर्खरीक 'वद तिनिर्माने 'नयने,' यस्य तम्। 'मेघामं' नीरदक्शमनं। तिडदाभम् 'खन्वरं' यस्य तं पीतान्वरम्। 'दिभुजं' देवकीपार्थनया अन्यभुजदयस्थापसं इतलात् यदा खष्टादमाचरे दिभुजा ध्येय इति सूचितम्। 'चानमुद्रा' इद्याश्चिततर्जन्यञ्ज्रुस्यागरूपा, तया, 'चार्ज्य' युक्तां। वनमाचा नाम नानायुष्प्रपक्षवरिचता पादतचावचिननी माला, विद्यते यस्य तं 'वनमालिनम्'। 'ईश्वरम्' उक्तार्थम्। 'ग्रोपाः' श्रीदामादयः, 'ग्रोष्यः' राधाद्याः, 'ग्रावः' कपिलाप्रभृतयः, ताभिः 'चावीतं' परिष्टतम्। कल्पचचाश्रयम्। 'दिर्थैः' खलाकितेः, चाभर्योः, 'उपेतं'। सिं हासनापरि रतमयसुवर्णकमसमधास्थितम। यमुनाजनतरङ्गसम्बन्धिवायुना सेवितम्। एवंविधं श्री'कृषां,' 'चेतसा,' 'चिन्तयन्' ध्यायन्, नरः 'संस्तेः' संसारात्, 'मुक्तो भवति'। 'इति'-श्रद्धा धानसमासर्थः ॥ ३॥

तस्य पुना रसनं जनभूमीन्द्सम्यातकामादि द्वन्यायेत्येकं पदं, गोविन्दायेति दितीयं, गोपीजनेति त्वतीयं, वन्नभायेति तुरीयं, खाचेति पन्चममिति पन्चपदीं जपन्, पन्चाङ्गं द्यावा-भ्रमी सूर्याचन्द्रमसौ साग्री तद्रूपतया ब्रह्म सम्पद्यते ब्रह्म सम्पद्यत इति॥ १३॥

दितीयप्रश्नोत्तरमाइ, तस्य पुना रसनमिति। 'तस्य' क्रम्यास्थात्त्रमाः, 'रसनं' 'जलभूमीन्द्रसम्पातकामादि' यथा स्यात् तथा पञ्चपदजपनम्, इति प्रेषः। 'जलं ककारः, भूमिः लकारः, ईकारः स्रिः, इन्दुः, स्रमुद्धाः, रतेषां सम्पातरूपं यत् कामनीजं, तत् स्रादो प्रथमं यथा स्यात्त्रथेत्यर्थः(१)। तानेत्रन पञ्च पदानि विद्योति, क्रम्यायेत्वेकं पदमित्यादिना। जकारसनस्य फलमाइ, पञ्चपदीमिति। 'पञ्चपदीं जपन्,' पुरुषः 'पञ्चाक्षं,' 'ब्रह्म' नारायमात्मकं, 'तद्रपतया' पञ्चाक्षक्रम्भादासेत्रन, प्राप्नातीति सम्बन्धः। इदन्तु सक्रस्त्रपण्चम्। पञ्चाक्षान्याः। 'द्यावान्भूमी,' तथा स्रमिना सहितौ 'साम्री,' 'सूर्यत्राचन्द्रमसौ' (१)। स्रम्यासः प्रथमोपनिषत्समास्यर्थः॥ १३॥

१ कामी वक्समावं कामवीजं तदादि क्रम्यायेति चतुर्ध्यं नमेकं पदिमत्यर्थः। रवं चलारि चतुरचराचि पद्यमं द्वाचरिमित पद्यपदीमेवंक्पां पद्यपदीं प्रजपन् पद्यात्रं कुर्यादिति श्रेषः। पद्यात्रानि इदयिश्ररःशिखाक्षयचास्त्राचि, चतुरचराचि चलार्यक्रानि, पद्यमं द्वाचरिमिति नारायक्षप्रचीते।ऽर्थः।

१ तत् पश्चात्रं पश्चरूपेषोपास्यमित्यात्त, द्यावाभूमी मूर्य्याचन्द्रमसी साग्नी इति। क्षीं कृष्णाय दिशायाने इदयाय नमः, नेविन्दाय भूत्यात्मने शिरसे खादा, नेपिकन-सर्यात्मने ग्रिस्से वपट् इत्यादित्रयोगः। इति वारायश्वत्रसीतोऽर्थः।

तदेव स्नोकः। क्नोमिखेतदादावादाय कृष्णाय गोवि-न्दायेति च गोपीजनवस्नभाय वृचद्वानव्या सक्तदुचरेत्(१) यो गतिस्तस्यास्ति मङ्गु नान्या गतिः स्यादिति(१) ॥ १४॥

उक्तरसने मन्नसंवादमाइ, तदेव इति । 'तत्' तत्र उक्ते रसने, 'रुषः,' 'श्लोकः' मन्तः, वर्त्तत इति । 'क्लीमिल्येतत्,' 'खादौ,' 'खादाय' उचायेत्र, खय 'क्लखाय', 'ग्लोबिन्दाय', 'इति,''च' पुनः, 'ग्लोपीजनवक्तभाय,' 'रुष्ट्रहानद्या' खाष्ट्रया, इत्यर्षः(१) । इति 'यः', 'सक्तत्' रक्तवारमिष, 'उच्चरेत्', 'तस्य,' 'मङ्गु' ग्लीमूं,पश्लाकुत्रसात्मरूप-'ग्लिः', भवति, 'खन्या' चन्त्रमस्त्रचरूपा, 'ग्लिः', तस्य 'न स्यात्'। 'इति'ग्लब्दो रसनसमास्यर्षः ॥ १३॥

कयशृष्टिः तद्भजनिमत्यस्योत्तरं वक्षुं भजनश्रव्दार्थमाष्ट्, भित-रस्य भजनिमिति। पर्यत्रायेखार्थाऽवगमासम्भवात् पुनर्भजनस्य बच्चबमाष्ट्र,

१ सकदणुषरेत् इति च, चिक्रितपुस्रकपाठः ।

२ क्लीमित्येतदादावादाय द्यायायोगं गोविन्दायेति नोपीजनवक्षभाय वृद्द्वन-भ्यामं तदप्यचरेत् या गतिसस्यास्ति मङ्चु नान्या गतिः स्यादिति व, चिक्रितपुस्तकपाठः । चस्य क्लीमिति कृष्णाययोगं कृष्णायेतिपदेन युक्तं गोविन्दायेत्यपि चादाय पुनः गोपीजन-वक्षभाय द्यद्वनवत् भ्यामवर्षः तदपि मायारूपं संसारकार्षं साहेति पदमुषरेत् यः । चविद्या दि तमोरूपा तमस्य भ्यामं भवति इति नारायक्प्रक्रीते।

जपपरिपाटीं दर्शयति। ज्ञीमित्येतदादावादाय जवार्या कृष्णायेति चतुर्थान-पदेन योगो यस्य तत्। वृषद्भानुर्भेषाप्रकागः परमेश्वरो विक्रवी तदीयया खाषया सचितमित जीवगोखामिप्रणीतोर्थः।

भिक्तरस्य भजनं तदिचामुत्रीपाधिनैरास्वेनैवामुस्विन् मनसः कत्पनमेतदेव च नैष्कर्म्यम् ॥ १५॥ क्रष्णं तं विप्रा बज्जधा यजन्ति गोविन्दं सन्तं बज्जधाऽऽराधयन्ति (१) गोपी-जनवन्तभो भुवनानि दभ्रे ॥ १६॥

ति हामुनित। 'इह', 'खमुन,' 'उपाधे:' रेहिकपारकी किकप्रया-जनस्य, 'नैरास्येन' निरसनमेव नैरास्यं तेन रेहिकामृश्चिकषककामना-राहित्येन, 'एव,' 'खमृश्चिन्' कृष्णाः व्रष्टां , 'मनसः,' 'कल्पनं' प्रमुखा तन्मयत्वं, तदेव भजनमृक्तमित्यर्थः। 'एतत्' भजनम्, 'एव', 'नैम्कमांन' चानम्, इत्यर्थः॥ १५॥

क्षयां तिमित । 'तं,' 'क्षयाम्' चानन्दात्मानं, 'विपाः' सास्त्विकाः, 'बद्धधा' द्रव्यव्यच्चपाठयच्चयोगयच्चादिभिः 'यजन्ति'। ग्रेशिवन्दिर्मात । ग्रोभूमिवेदविदितं, 'सन्तं,' 'बद्धधा' श्रवयाकी चैनसार्यापादसेवनार्धन-वन्दनदास्यस्थात्मानिवेदनादिभिः, विपादयः सर्वेऽपि 'साराध्यन्ति' सेवयन्ति । तस्येव सेव्यत्वे हेतुः ग्रेषिजनवस्त्रभ इति । 'ग्रेष्यः' पाचन-चक्तयः, तासां 'जनः' समुदायः, तस्य 'वस्त्रभः' खामी प्रेरकः सन्, 'भुवनानि' चनन्त्वे।टिब्रच्चाय्डानि 'दन्ने'(१) । उपलच्चयमेतत् । ख्या-चयत् पाचयति पाचयिष्यति च ॥ १ ६ ॥

१ बङ्घा रसना इति घ, चिकितपुराकपाठः।

२ भजनप्रकरके भजनफर्स भजनवातिरेकफर्स्य सन्तपदैरेव दर्भयित द्वव्यां तिसित । नारदादय दव प्राक्तमार्गेच पूजयिन । मोविन्दमाविष्कृतकेप्रोरवयसं सन्तं गोप्य दवानु-राजमार्गेचाराधयिन । दभे धारयित पास्वयित भजनफर्सप्रधानेन पूज्यते च दति जीव-गोसामिकृतोऽर्थः ।

खाराश्रितो जगदेजयत् सुरेताः॥१७॥ वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो जन्ये जन्ये पञ्चरूपो बभूव। क्रष्णसयैकोऽपि जगद्वितार्थं ग्रब्देनासौ पञ्चपदो विभानीति॥१८॥

यवं पासकतात् सेवातमुक्तम्, स्वयं जनकतादिष तदाः स्वाहात्रित-हित । 'खाहा' माया, तदा श्रितः' तदि धरुता सन्, 'जगत्' स्वयं क्षानाम-रूपम्, 'एजयत्' स्वास्यत् विक्तीभावायान् समकदीत्, सिंहकाले(१)। स्वत्र हेतुमर्भविक्षेयवामाह, स्रोताहित्। स्रु ग्रीभनं चित्रूपं मायायां प्रतिविक्षोन्मुखं, रेता यस सः 'स्रोताः'। "रूपं रूपं प्रतिरूपे बभूव" हित्रुतेः, "मम योनिर्महद् ब्रह्म तिस्मन् गर्भे दसास्य हम् दित स्रृते स्वार्थ ॥

भत्तानामाराधनसीकर्यायं ग्रीपालिवदात्मकण्यस्विया भगवान् पश्चमा भाविति सहस्रान्तमान् वायुर्यथेकद्दति। 'यथा,' 'भुवनं' ब्रह्माखं, 'प्रविद्धः', 'एकः,' एव, 'वायुः,' 'जन्ये जन्ये' ग्ररीरे ग्ररीरे प्रतिग्ररीरं, 'पश्च्यः' प्राचापानस्यानादिख्यः, 'वभूव'। 'तथा' एव 'स्कोऽपि,' 'श्वसी' कृष्णः, 'जगदितार्थं,' 'भुवनं,' 'प्रविद्धः,' 'ग्रन्थेन' ग्रीपाल-विद्यात्मक्षेन, पश्च पदानि यस्य सः 'पश्चपदः,' विविधं 'भाति' प्रकाग्रते, 'इति'ग्रन्थो मन्तसमास्यर्थः॥ १८॥

माविन्दं सन्तं बद्धधाराध्यन्तीत्युक्तं, तत्राराधनात्मकमुपासनं एक्तिताह, ते होचुरुपासनमेतस्येति। 'ते' सनकादयः, 'इ' किस,

१ खादामाया चात्रिता ७ इत्यक्षयं सम्बोधने पादपूरके वा जगत् एजयत् भजन-व्यक्तिरेकेक संसारप्रवादेक कम्पयति इत्यर्थः। सुरेताः चतिवस्त्वतां श्रोभनं रेती भगव-द्वीर्य्यं यस्यामिति वा इति जीवगोसामिकृतोःर्थः।

ते चोचुक्पासनमेतस्य परमातानो गोविन्दस्याखिना-धारिणो ब्रूचीति॥१८॥ तानुवाच यत्तस्य पीठं चैरप्याष्ट--पनाग्र^(१)मम्बुजं। तदन्तरानिकेऽननाम्मयुगं ^(१) तद-न्तराद्याणीखिनवीजं क्रष्णाय नम इति^(१) वीजाद्यं ^(१)

'रतस्यः' 'परमातानः' श्रीष्ठव्यस्य, 'ग्रेविन्दस्य', 'स्विकाधारियः', 'उपा-सनम्' चाराधनं, 'ब्रूड्' कथय, इत्यर्थः ॥ १९॥

तत्राराधनाधिष्ठानभूतं पीठिनिरूपणमवतारयित, तानुवाचिति। 'यत् तस्य पीठं,' तत् 'तान्,' प्रति ब्रह्मा 'उवाच,' इत्यर्थः। स्मृष्टं चालितं पीठं स्थापयिला 'हैरण्याष्टपलामं' सावकाष्टरसम्, 'असुजं,' स्थापयेत् गन्धयुतेन चन्दनेन वा लिखेत् इत्यर्थः। 'तदन्तरालिने' तस्य कमलस्य अन्तरासभवे प्रदेभो, 'अनलाखयुगं' निकाणहर्यं, संलिखेदित्यर्थः। तदन्तराद्यार्थेति। तस्य षट्काणस्य, 'अन्तरा' मध्ये, 'आद्यार्थं' रूपम् 'चलिसं' कार्यंग्यं 'वीजं' कामवीजं, साध्यनाम कर्मानाम च लिखेदिति प्रेषः। तद्रतं सनत्कुमारसंहितायां। "कर्मिकायां लिखेदिहिएटितं मखलद्यं। तस्य मध्ये लिखेदीजं साधात्यं कर्मसंयुतम्' इति॥ 'क्षणाय नम इति,' 'वीजाद्यं' वीजेन कामवीजेन

१ हरे एक महप लाम मिति ख, घ, क, चिक्रितपु सक नयपाटः नारायससमातः।

२ तदनाराज्ञिकानकाभृयुगिमिति ख, घ, छ, चिक्रितपु सक्वनयपाठः।

१ तदमाराद्याचें विजिजीत कृष्णाय नम इति घ, चिक्रितपुष्तकपाठः। तदमारा-द्याचें खिजनीतं कृष्णायनम इति ख,चिक्रितपुष्तकपाठी नारायचाभित्रेती जीवगीखासि-वाख्यातय।

४ वीजाढ्रामिति घ, क, चिक्रितपुसकद्वयपाठः।

सब्रह्माणमाधायानङ्गगायत्रों^(१) यथावद्यानिख्य^(१) भूम-

कार्यं घडमं, सन्धिषु घडचारं सिखेत् "घडमं सन्धिषु" इति क्रमदीपिकासेः। सब्रद्धायमिति। पूर्विखितं कर्यिकास्थमन द्भ-वीजं 'सब्रह्माग्रम्' खरादणाचरमन्त्रोपेतम्, 'बाधाय,' इत्यर्थः। मन्त-तद्रक्रीरभेदात् मन्त्रे ब्रह्मा। तद्रतं संहितायां। "ततः शिष्टैर्माने।-वैंगोलं कामं वेख्येत् सधीः" इति। घट्कायास्य पूर्वनैर्ऋत्यवायय-को ग्रेष्ठ श्रीमिति वीजं जिलेत्। आग्रेयप सिमेशानको ग्रेष्ठ, च्रीमिति वीजं बिबेदिति ग्रेषः। "श्रियं घट्ने। बनेशे बेषु रेन्द्रनैर्न्शितवायुषु। ञ्जालिस्थ विलिखेन्मायां विचुवारणभूलिषु" इति संचितोक्षेः। खनङ्गायत्रीमिति। चष्टदसस्य सर्वजनसमी इनके प्ररेषु 'अनङ्ग-ग्रायत्रीं' कामगायत्रीं, (र) 'यथावत्' त्रिष्यः त्रिष्यः, व्यानि बेदिलार्थः। "कामदेवाय सर्वजनप्रियाय सर्वजनसम्मा इनाय व्यव व्यव प्रज्वन प्रज्यन सर्वजनस्य इदयं मे वर्ष कुर कुर खाइ।" इत्यष्टाचलारिंग्रदचरं माला-मन्त्रं, प्रतिदक्षं घट् घट् चन्नरं क्रमेश किले दिलावनो दशम्। खरु-दलस्योपरि उत्तं क्रता मालकाचरैने छ्येदिलाप नोधम्। "बचरैः कामगायया वेष्ट्येत् केणरे सुधीः। काममानामनोवर्णेदं केव्वष्टस मन्त्रवित्॥ चि**ले दुचाननैर्भ**तीर्मात्वनां तदि चिलिवेत्।"

१ बाधायानक्रमनु मायनीमिति ख, घ, चिक्रितपुसकद्वयपाठः।

२ यथावद्यासञ्च इति व, क, चिक्रितपुस्तकद्वयपाठः। यथावद्यापय्य इति स्त, चिक्रितपुस्तकपाठः।

२ चनक्रगायनी कामदेवाय विदान्ते पुष्पवाचाय घीमन्ति तद्गीनक्र प्रचीदयादिति नाराथकः।

पडनं ग्रूचवेष्टितं^(१) क्रालाऽङ्गवास्त्रदेवादिस्कार्खादिस्वश्चती-

संहितोतेः। भूमार्डनं भूनवेष्टितं क्रतेति। "भूग्रहं चतुरसं स्यादष्टवज्रुयुतं मुने" इति संदितोत्तेः। चसीव घारणायन्त्रतात् साधारिलेखनमध्यादावसूसचत्। खतरव घारबानिधानं तत्पलच संदितायामुतं। " जला सद्यमान्येन मन्त्रसम्पातपूर्वकं। यित्वाऽयुतं अप्ताधारयेट् यन्त्रमुत्तमं॥ त्रेकोक्येश्वर्य्यानाप्नीति देवैरपि स पूजितः।" इत्यादिना। इदन्तु केवलं धारकार्थं यदा यन्त्रं क्रियते तदिभप्रायेखोतां, यदा युनः पूजार्थं यन्त्रं विश्वते तदा तु पूर्वं "मग्रुकादि प्रथियन्तं पूजयेत् कर्शिकोपरि। अध्ययादिपीठपादेषु धर्मादि खतुरी यजेत्। चतुर्व पीठगाचेषु धर्मादि खतुरी यजेत्। कर्बिकायां ततीऽनन्तं पद्मान्तम् ततो यजेत्। तारवर्बे प्रक्षिन्नानि मख-चानि क्रमात् ततः । सन्तं रजक्तम इति यजेतात्मचतुष्ट्यम् । चात्मान्त-रामा परमाता चानातोति कमात् सधीः। विमचीत्वर्षिबी चाना किया थोगेति पश्चमी । प्रक्री सत्या तथेषानानु यन्ता नवमी स्मृता । प्रागाद्यसस पत्रेषु कार्शिकायां यजेन्मुने"। "बीं नमी विश्ववे सर्वभूताताने वासुदेवाय सर्वाक्षसंथीगयोगपद्मपीठाताने नमः" इति पीठमन्त्रमयमस्योपिर विन्यस्य, "ततः पीठंसमभार्चं देवमावास्त्र नारदा सर्व्यादिधूपदीपा-दीनुपचारान् प्रकल्पयेत् "॥ खाघावरकपूजां मुर्यात्। तत्र प्रथमाव-रसमाइ, चङ्गेति। घट्काससामेयनैर्ऋत्यवाययेशानेषु इदयशिरः-शिखाकवर्षान, खासभागे नेत्रं, पूर्वादिदिचुच खसुम्, इत्यङ्कानि पूज्येत्। दितीयावरसमाञ्च, वासुदेवादीति। पूर्वपश्चिमयास्योत्तर-यथाक्रमं 'वासुदेव'सङ्गर्धवापद्यन्नानितदान् पूज्येत्।

१ मसनेष्टितमिति घ, चिक्रितपुस्तकपाढः।

न्द्रादिवसुदे वादिपार्थादिनिध्यावीतं यजेत्। सन्ध्यासु(१)

बाग्रेयनैक्ट्रत्यव यखेशानेषु, यथाकमं शान्तिश्रीसरखतीरतीः पृज-यत्। त्रतीयागर्बमादः। 'विकारणादि''खणत्तयः' क्रवाणत्त्रयः। " द् से वृ दिकार े सियभामा जाम्बवती तथा। नाम्रजिती मित्रविन्दा कालिन्दी च तटाः परा॥ लच्चाणा च सुशीला च पून्या देगामित-प्रभा" इत्यर्धः। चतुर्थपञ्चमादावरखमाच, इन्द्रादिवसुदेवादिपार्था-दीति। चात्र वार्द्धवादावरणमेव चतुर्धं बोध्यम्। पूर्वभागे वसु-देवाय पीतवार्षाय। चामेयकोगो देवकी प्रशामलाये। दिवागभागे नन्दाय कर्म् रागीराय । नैक्रित्यकी से यशोदाये नुष्कुमारी थे। पश्चिम बलदेवाय प्रारम्खनुन्देनदुधवलाय। वायचे कलापश्चामलाये सुभदाये। उत्तरकोबे गोरंभः। र्घानकोबे गोपीसः। पद्मन्तु पार्णदावरणम्। चर्जुननिमाः तो द्ववदायमविश्वक्सेनसात्यिमगरुडनारदपर्वतान् पूज्येत्। वर्षं निधाव रकम्। पूर्वदिशि इन्द्रनिधये। खामेयदिशि नीचनिधये। याम्य कुन्दाय नमः। नैऋंत्यकी से मकराय। पश्चिमे खानन्दाय। वायचे कच्छाया। उत्तरे ग्रङ्खनिधये। ईग्रानकी से पदानिधये। सप्तमिन्द्राद्याः वर्णाम्। इन्द्रायः पीतवर्णाय पूर्व्यदेखे। खप्नये रक्त-यमाय नीजोत्राजवर्णाय। रच्चोऽधिपतये क्रमावर्णाय। वर्षाय श्रक्तवर्णाय। कुवेराय नीचवर्णाय। वायवे धुमुवर्णाय । इं भानाय श्वेतवर्शाय। पूर्वेभानयोर्माध्ये ब्रह्मा गोरोचनावर्णाय। नैक्ई-त्यपश्चिमयोर्मध्ये प्रेमनागाय स्रोतवर्णाय। पूर्वद् ने वज्जाय पीतवर्णाय। मात्रये शुक्तवर्णाय। 'दाहाय नीलवर्णाय। खद्गाय श्वेतवर्णाय। पामाय विद्रदर्शाय। ध त्रजाय रत्तावर्शाय। गदाये। जिल्लाय सुक्षावर्शाय

१ विसन्धासु इति व , चिक्रितपुक्तकप ठः।

प्रतिपित्तिभिरूपचारै स्तेनास्याखिलं भवत्यखिलं भवतीति॥ २०॥ तदिच स्नोका भवन्ति। एको वश्री सर्वगः कृष्ण देख एकोऽपि सन् वक्तधा यो विभाति। तं पीठस्थं येऽनु भजन्ति धीरास्तेषां सुखं ग्राश्वतं नेतरेषाम्॥ २१॥

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बद्रनां यो विद्धाति

इत्यस्मावरमम्। खावीतमिति। सतै: खावरमैः 'खावीतं,' परमेश्वरं, 'यजेत्' पूज्येत्। 'सन्थासु' त्रिकाखसन्थासु, 'पृतिपत्तिभिः' धानैः, 'उपचारैः' वोङ्ग्रोपचारादिमहाराजोपचारैः, पूज्यदित्यर्थः। तेनेति। 'तेन' खाराधनेन, 'खस्य' खाराधकस्य, 'खिलक्षं' पुरुषार्थचतुरुयं, 'भवति'। खम्यासो दितीयोपनिषत्समास्यर्थः॥ २०॥

उक्तीपासने मक्तसम्मितिमा इ, ति हिति। 'तत्' तिस्निन् हरे, 'इह' उक्तीपासने, 'स्नोकाः' मन्ताः, खिप 'भविन्तः' वर्त्तने। एको वण्णी सर्वग्र इति। 'एकः' सजातीयिजातीयस्वग्रतमेदरि इतः, खत एव वण्णे सर्व्यम्यास्तीति 'वण्णी,' 'सर्वग्रः' सर्वत्र देण्यतः कास्तरः वस्त्रस्वापरि-क्तिः, 'ख्रस्यः' ख्रान्दः, ख्रत एव 'ईखः' ब्रह्मादीनामिष स्त्रस्यः। पूर्वीक्तः 'एकोऽपि सन्,' 'यः' ख्रस्यः, जगत्पासनाय 'वळ्या' पद्यस्पः, 'विभाति' विविधं पृकाण्यते, वायुरिव पृत्तादिभेदैः। तं पीठस्थमिति। 'तं' पद्यपदात्मकं पृत्राक्तं, 'पीठस्थम्,' 'खन्,' स्वचीक्तस्य, 'ये,' 'धीराः' एकाय-वित्ताः, 'भजिन्त', 'तेषाम्,' एव 'श्रास्ततं' नित्यानन्दात्मकं, 'स्रसं,' 'न,' तु 'इतरेषां' तद्रितिरिक्तानाम्। स्वच्छावातिव रूपादर्णनम्॥ १९॥

मन्त्रान्तरमाच, निर्त्या नित्यानामिति। 'नित्यानाम्' इव मध्ये यो वस्तु-ग्रत्या 'नित्यः,' तथा 'चेतनानाम्,'इव बुद्धादीनां,मध्ये वस्तृतः 'चेतनः', कामान्। तं पोटगं येऽनुभजन्ति धीराक्षेषां सिद्धिः शास्त्रती नेतरेषाम्॥ २२॥

एतद् विष्णेः परमं पदं ये नित्ययुक्ताः संयजन्ते न कामान्। तेषामसौ गोपरूपः प्रयत्नात् प्रकाशयेत् त्रातमपदं तदेव॥२३॥ यो ब्रह्माणं विद्धाति पूर्वं यो विद्यास्तसौ गोपायित^(१) सम क्षणः। तं च देवमातमवुद्धिप्रकाशं^(१) मुमुर्जुर्वे शरण-

तथा 'यः,''एकः,' सन्, पश्चपदरूपेश 'बद्धनां,' 'कामान्,' 'विद्धाति'। 'पीठां,' 'थे,' 'खनुभजन्ति,"धीराः,' 'तेषां सिन्धः', 'प्राश्वती' खनपा-चिनी, 'न',तु'इतरेषाम्,'इति पूर्ववत्॥ २२॥

मन्त्रान्तरमाइ, एतद् विश्वीरिति । 'ये' साधकाः, 'एतत्' यन्त्रात्मकं, 'विश्वीः पदं,' 'नित्ययुक्ताः' सततं प्रयक्षवन्तः, 'संयजन्ते' सम्यगाराधयन्ति, 'न,'तु 'कामान्,' कामयन्ते । 'तेष्ठां' साधकी क्तमानाम्, 'असी,' गोपालक-'ह्रपः,' 'गोप'वेषो वा 'प्रयक्षात्', 'जात्मपदं' खरूपं, 'तदा' 'एव' भजन्त्रात् विस्तरमये एव, 'प्रकाष्येत्' प्रत्यन्तं दर्षयेत् ॥ २३॥

ननु तत्पृताशे सित किं स्यादिताशङ्का मुमुद्धश्ररस्योतीय तस्य मोद्यपृदतमाइ, यो बद्धार्यामिति। 'वः' परमेश्वरः क्यः, 'पूर्व' स्टिसमये, 'ब्रह्मार्या,' 'विद्धाति' रचयति, 'वः' क्वयाः, 'तस्रो' तद्यें, 'विद्याः' वेदान्, पृत्वयपयोधिजने मत्स्यइय्यीवादिरूपेया 'गोपार्यत' तस्रो उपदिशति वा।

१ थी विद्यां गायथित सार्रात च. चिक्रितपुर्तकपाठः । अस्य गाययितसा गागं कारतवानित न रायणश्रकोते थेः ।

२ अप्रताद्यनिप्रकाशस्ति व. चिक्कितपुस्तकपाठः । एतस्य चरमानाःकरण्डन्या अध्यक्तितः गार् २ णप्रकीतो उर्थः ।

मनुब्रजेत्॥ ५४॥

त्रेद्वारेणान्तरितं ये जपन्ति गोविन्दस्य पञ्चपदं मनुम्। तेषामसौ दर्शयेदात्मरूपं^(१) तस्तात् मुमुत्तुरभ्यमेन्नित्य-श्रान्ये^(१)॥ २५॥

एतसादन्ये पञ्चपदादभूवन् गोविन्दस्य मनवी मानवासी

'तं', 'देवं' द्योतनात्मकम्, 'आत्मनुद्धिप्रकाणं' खप्रकाणं, 'मुमुन्तः' मोच्चार्थी, 'ग्ररणमनुष्रजेत्'॥ २४॥

यश्चपदमन्त्रस्य मन्त्रान्तरम् जलं विवद्यः पृषावपृटितं पश्चपदरेसनपाज माह, के छ्कारेकान्तरितिमिति। 'कोङ्कारेका', 'कन्तरितं पृटितं, 'गोजिन्द-स्य', 'पश्चपदं', 'मनुं' मन्त्रं, 'ये जपन्ति', 'तेषाम्', 'कसी' गोविन्दः, 'कात्मरूपं', 'दर्शयेत्'। 'तत्मात्' कारणात्, 'मृमुद्याः' पुरुषः, 'नित्य-प्रान्त्ये' संसारानर्थणान्त्ये, गोविन्दमन्त्रम् 'ज्ञाकरेत्' पुनः पुनर्भपेत्॥ २५॥

रतसादन्ये मुक्ता बभृवृश्तिखाइ। 'रतसात्' पश्चपदमन्त्रात्, 'अन्धे' दश्राचराद्याः, 'गोविन्द्ख मजवः', 'मानवानां' सनकादीनां, स्फ्राश्ताः

१ पचपदं मनुंतं। तसीवासी दर्शयेदातारूपमिति घ,चिक्रितपुस्तकपाटः। अस्य मनुंतमिति मनुं मन्त्रं तं प्रसिद्धं। तसीवेति तसा चातारूपमधीदरीचेदेवेत्यन्वय इति नारायणप्रजीतीर्थाः।

२ नित्यमान्ये। तसा एतम् चरत्यसेवान्निमाने इति घ, विक्रित्ये सकेऽधिकपाटः। एतसा तसी जापकाय निमाने रटचे चरति वाञ्चितं वर्षति परम् चस्यत् चसेवनात सेवनं विना जचारकमानेस इति नारायस्त्रक्षीतोऽर्थः।

दशाणीद्यास्तेऽपि सङ्क्रन्दनाद्यैरभ्यस्यन्ते भूतिकामैर्यथावत् ॥ २६॥

यदेतस्य सद्धपार्थं वाचा वेदयन्ति ते पप्रच्छः, तदु स्रोवाच ब्रह्मसवनं चरतो मे ध्यातः(१) स्तुतः पराद्द्रान्ते सोऽबुध्यत गोपवेश्रो मे पुरुषः परस्तादाविर्वभूव॥ २०॥

बभूतः। 'तेऽपि,'सङ्कन्दनायः' सङ्कन्दन इन्द्रः "सङ्कन्दनोनिमिष्ठ रकवीरः प्रतधासेनां खज्यत् साकमिन्द्रः" इतिष्ठृतेः, "सङ्कन्दनो दुख्यवनः" इत्यमरकोषाच तत्पुमुखैः, 'भूतिकामैः,' 'यथावत्' विध्रक्त-पुकारेग, 'खम्यस्यन्ते' ॥२६॥

खन हेतुमाह, यदेतस्थेति। 'यत्' यसात् कारकात्, ते मन्नाः, 'यतस्य' श्रीक्तवास्य, 'खरूप'भूतम् 'खर्षे' सर्व्वपृष्वार्धसाधकं, 'वाचा वेदयन्ति'। 'ते' मुनयः पद्मपदमन्त्रखरूपं जिज्ञासवः, 'पपृष्ठः'। तदु हेति। 'तत्' पद्मपदखरूपम्, 'उ'खपि, 'ह' किल, श्रद्धा 'उवाच'। किं। 'श्रद्धसवनं' श्रद्धाकः सवनं प्रथमपरार्द्धं, वर्त्तमानस्य 'मे,' 'धातः', 'ज्ञतः', परमेश्वरः, 'परार्द्धान्ते'रात्यन्ते,(१)'सः, ''ग्रोपवेग्रः', 'खनुध्यत' याग-निद्रातः उत्थितः,(१) तथा 'मे,' 'पुरुक्तात्,' 'खाविवंभूव,' 'पुष्ठाः' ॥२०॥

१ तदु दोवाच त्राचाचोत्रावनवरतं मे धात इति ख, घ, चिक्रितपुस्तकद्वयाठः। चस्य तत् सक्षं उ सम्बोधने द प्रसिद्धी त्राचाचः त्रचाऽसी पूर्वेकः किमुवाचेत्याद, खनवरतं निरन्तरं मे मया धात इति नारायकप्रकीतोऽर्थः।

२ परार्द्धाने प्रथमपरार्द्धसाने पाद्मकलासाने इति जीवगीसामिप्रकीतोऽर्थः ।

२ चनुध्यत सत्कर्तृके ध्याने खवेच खावधानं प्रकटीचकार इति जीवगीखामि-कतोऽर्थः।

ततः प्रणतो मयाऽनुकृत्वेन इदा मद्यमष्टादशाणं खरूपं दृष्टये दत्वा अन्तर्चितः पुनः सिद्धचतो मे(१)प्रादुरभूत्। तेष्वचरेषु भविष्यज्जगद्रूपं प्रकाशयन् तदिच्(१) ककारात्(१) आपो चकारात् पृथिवी ईतोऽग्निर्विन्दोरिन्दुस्तत्सम्पातात्

ततः पुणतहित । 'ततः' तदनन्तरं, 'मया,' अनुकूषेन' तत्रानुरक्तेन, 'ह्रदा' मनसा, 'प्रणतः' नमखृतः, अथ 'मह्मम्,' 'अष्टादण्यार्थमन्तं खस्य 'खल्प'भूतं स्रष्ट्यार्थ' 'दला,'परमेश्वरः 'अन्तर्हितः' । पुनः सिस्चतहित । खय 'सिस्चतः' स्रष्टिंकर्न्तु मिच्चतः, 'मे,' पुरस्तत् गोपवेषधरः 'प्रादुर-भूत्' । किं कुर्वन् 'तेषु' खष्टादणस् खचरेषु,'भविष्यत् जगत्', 'प्रकाण-यन्'मनोगोचरं कुर्वन् । तदिहेति । 'तत्' तिसान् जगदूपे प्रदर्शिते सित, 'हह' खष्टादणाचरमन्ते, 'कात्' ककारात्, 'खापः' जलं, 'खकारात्',

१ पुनः सिसृचाने इति घ,चिक्नितपुस्तकपाटः। रतस्य पुनस्ततः पासप्राप्तानन्तरं सिस्चा सष्ट्रसिच्छा इति नारायक्प्रकोते।ऽर्थः।

२ प्रकाशयन् तदाच चाकाशादापो जलात् श्रचिनी ततो अग्निर्वन्दोरिन्दुस्तत्सम्यात दर्के इति घ,चिक्रितपुस्तकपाटः । एतस्य प्रकाशयन् प्रकटीकुर्वन् ब्रह्मा तत् जगत् चाच वक्तीति युक्तें चः । प्रकाशयन् तदिचेति युक्तः पाटः । तत् जगत् इच प्रकाशयन् प्रकटितवानच- नित्यर्थः । पद्मपदानां क्रमेण मृष्टिविभागमाच चाकाशादिति । चाकाशादापो वायु- तेजोद्वारित बोद्द्यं । तस्मादा एतसादात्मन चाकाशः स्मूत इत्यादिश्रुत्यन्तरात् । ततो- अग्नि वायः श्रिया चित्रः ।

र कादापी ज्ञात् प्रथिवी रेतीऽग्निरित्यादिपाठलु जीवगीस्त्रासिभिधृतः। कात् कामवीजामर्गतककारजपप्रभावात् आपी जाता रितिग्रषः। ज्ञात् ज्ञकारात् प्रथिवी र्दतः र्दकारादित्यादियोख्यातो विश्वेषराभिष्रेतस्, टीक.यां कादित्यादिपाठस्य धृत-लात्।

तदर्क इति क्रीङ्कारादस्वजम् । क्रष्णायादाकाशं(९) खाद्वायु-रित्युत्तरात् सुरभिं विद्याः (९)प्रादुः कार्षं तदुत्तरात् स्तीपुसादि चेदं सकलमिदं सकलमिति ॥ २८॥

एतस्यैव यजनेन चन्द्रध्वजो गतमोत्तमात्मनं वेद द्रव्योङ्गा-

'ए थिवी' भू मिः, 'ई कारात् 'खि धः', 'विन्दोः इन्दः' खनुखारात् चन्दः, 'तस्म्यातात्' तेषां कामादीनां संश्लियक्षात् स्नीक्षारात्, 'तदकं इतिस्नीक्षारादस्जम्'। 'क्षणाय', इतिपदात्, 'खाकाणम्', इतिपदार्थं 'खस्जम्'। खादायुरिति। 'खात्' विदाकाणात्, श्रन्दराणि वेदितुं गो-विन्दायेतिपदात्, 'वायुः इति,' 'खस्जम्'। 'उत्तरात्' पददयात्मकात् गोपीजनवस्त्रभायेतिपदात्, 'सुरिभः' कामधेनुः, 'विद्याः' चतुर्दश्, इति 'प्रादुरकार्ष'(ह)। 'तदुत्तरात्' खाद्यापदात्, 'स्नीपुंसादि च' स्नीपुरुषस्त्रीवं च, 'सक्कं' स्थावरजङ्गमं, 'प्रादुरकार्षम्'(ह)। ख्रायासकृतीयोपनि-षस्त्रमास्त्रर्थः। 'इति'पदं पञ्चपदस्य स्विस्तमास्त्रर्थः॥ २०॥

नक्षेवलं सिरुसामर्थाद रवायं मन्त्रीऽपितु महेश्वरस्थातमञ्चान-प्रदोऽपीत्याह, रतस्थैवेति । 'रतस्थैव' पञ्चपदस्थैव, 'यजनेन', 'चन्द्रभजः' नाम चन्द्रमौतिरीश्वरः,'गतमोहं,'यया स्थान्तथा,'खात्मानं,''वेद' बुबुधे,

१ क्रम्णादाकाश्रमिति घ, चिक्रितपुराकपाठः।

२ सुरभीर्बिदा इति घ, चिक्रितपु सकपः ठः।

३ उत्तरात् गोविन्दपदात सुरभयो गावः विदास ताः प्रादुरकार्षः। सुरभिनिति पाठे सुरभिं गोजातिमिति नारायणप्रणीतोऽर्थः।

४ तदुत्तरात् गोपीजनादिपदात् स्त्रीपु सादिचासृज्ञम् । खनापि तदुत्तरादितिबोद्ध्यं ।
 तत्र सः इापदं तस्त्रादिदं सकलं तदुपकरणं च अमृज्ञमिति नारायकप्रकोतोऽर्थः ।

रान्तरानिकं मनुमावर्त्तयेत् सङ्गरिहतोऽभ्यानयत्(१) ॥ २८ ॥ तिद्वष्पोः परमं पदं सदा पश्यन्ति ह्वरयः। दिवीव चत्तुराततं तसादेनं नित्यमभ्यसेन्नित्यमभ्यसेदिति ॥ ३० ॥

तदा जरेके यस्य प्रथमपदाङ्गमिहितीयपदा ज्जलं तिया-त्रोजः (१) चतुर्था दायु सरमाञ्जोम इति वैष्ण्वं पञ्चत्या हित-

'इति' कारणात्, इरानीन्तनः 'चौडारान्तराश्विकं' प्रणवसम्पृटितं, 'मनुम्' अर्थादणाच्चरं,'सङ्गरहितः', 'आवर्त्तयेत्'। द्यावर्त्तनेन स्रप्रस्चं परमात्मानम् 'स्रभ्यानयत्' सानयत्, इत्यर्थः ॥ २९॥

परमात्मसन्तं विद्योति, ति स्योरिति। 'तत्' प्रसिद्धं, 'विद्योः', 'पदं' पदनीयसन्तं, 'दिवि' इति विद्योतनात्मके सन्ते, 'सूरयः' चानिनः, 'सदा पद्यन्ति'। कीट प्रं पदं, 'चचुः' 'इव' चरेति चचुः पकाममेवे त्यर्थः। पुनः कीट प्रं पदं, 'चाततं' व्यापकम्। उपसंदरित, तस्मादिति। 'तस्मात्' विद्युपाप्तिचेतु वात्, 'एनं' चरादणाच्चरं मन्तं, 'नित्यमभ्यसेत्'। चभ्यासः चतुर्थोपनिष्वस्मात्यर्थः॥ ३०॥

१ ग्रतमेः इमात्मानं वेदियत्व चोङ्कारान्तराज्ञिकं मनुमावर्त्तयन् सङ्गरिहतोऽत्यापतत् । इति घ, चिक्रितपु तकप ठः । एतस्य चन्द्रध्ये नाम कियदाजा भिक्तयुक्तः वेदियता ज्ञाला मनु मन्त्रम् दावर्त्तयम् जप्तवान् । चत्यापतत् संसारमतिक्रस्य चपतत् चाप्तवान् । चभ्यापतिदितिपाठे चाभिमुखोनापतत् इति नारायण्प्रणीतौऽर्थः ।

२ हतीयपदाने ज इति घ, चिक्रितपुस्तकपः ठो विश्वेश्वराभिप्रेतः।

मयं मन्त्रं क्षण्णवभासं केवल्यस्ये सततमावर्त्तयेदिति ॥३१॥
तदत्र गायाः। यस्य पूर्वपदाङ्कृमिर्दितोयात्मिल्लोङ्गवः।
ततीयात्तेज उङ्गृतं चतुर्याद् गन्धवास्तः॥ ३२॥
पत्त्रमादम्वरोत्पत्तिस्तमेवैकं समभ्यसेत्।
चन्द्रध्वजोऽगमिद्दण्णेः परमं पदमव्ययं॥ ३३॥
ततो विशुद्धं विमलं विश्रोक्षमश्रेषलोभादिनिरस्तसङ्गम्।
यत्तत् पदं पत्त्रपदं तदेव स वास्तदेवो न यतोन्यदस्ति॥ ३४॥

खयमन्तान्तरेण पश्चपदेश्यो जगत्य दिं निरूपर्यात, तदा छरे के इति। 'तत्' तत्र खरादणाचारे, 'रक्ते' मुनयः, 'खाडः'। 'प्रथमपदात् भूमिः'। 'दितीयपदात् जलं'। 'त्रतीय'पदात् 'तेजः',। 'चतुर्थपदात् 'वायुः'। 'चरमात् खोम'। 'इति', 'तेष्णवं,"पश्च खाष्ट्रतयः, पश्चपदानि, तन्'मयं,' 'मन्तं', 'क्षणां'रूपप्रकाणाकं 'केविन्यस्य मोचास्य, 'स्त्ये' मार्गाय, 'सततं,' 'खावर्चयेत्' खश्यसेत्॥ ३१॥॥ ३२॥ ३३॥

ततो विश्वद्वमिति। 'ततः' कारणात्, विश्वदलादिगुणेपितं 'तत्' प्रसिद्धं, 'यत्', 'पदं' पदनीयल्लणं, 'तत्'पदं, पदमेव पश्चधा गुणितं पदं 'पश्चपदं,' इति विग्रन्दः। 'विश्वद्धं' चिच्चेत्रातिः, 'विमलं' खविद्या-दिमलर्ग्दितं, 'विश्वोत्तं' मनलापरिष्टतं, 'खशेषाः' 'लीभाद्यः, तेषां, 'निरलः' 'सङ्गः' यितान् विश्वदादिगुणानं परेमव। वासुदेवः, वसत्य-सिवित वासुः, स चासौ देवस्वति 'वासुदेवः'। 'यतः' वासुदेवात्, 'अन्यत्,' किश्वत् 'नाल्लि'॥ ३८॥

तमेकं गोविन्दं सिचदानन्दविग्रचं पञ्चपदं वृन्दावनस्य-भूरुचतलासीनं सततं समरुद्रणोऽचं परमया स्तत्या तोष-यामि॥ ३५॥

> त्रों नमो विश्वरूपाय विश्विख्यित्तचे । विश्वेश्वराय विश्वाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३६ ॥ नमो विज्ञानरूपाय परमानन्दरूपिणे । कृष्णाय गोपीनाथाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३०॥ नमः कमलनेत्राय नमः कमलमालिने । नमः कमलनाभाय कमलापतय नमः ॥ ३८॥ वर्षापीडाभिरामाय(१) रामाया(१)कुण्डमेधसे ।

चतः पश्चपदात्मकं वासुदेवमेवाहं क्तीमीत्याह, तमेकमिति। 'तं' विशुद्धपदात्मकम्, 'एकं'सजातीयविजातीयखग्रतभेदरहितं, 'सिचदानन्द' पदात्मकखरूपं, 'गोविन्दं', 'पश्चपदात्मकं 'रुन्दावने,' 'सुरभूकहाः' कस्य-रुचाः, तेषां 'तले,' 'आसीनं', 'सततं' निरन्तरं, 'समकदूषः,' 'खइं' ब्रह्मा, 'परमया क्लत्या तौष्ठ्यामि'॥ ३५॥

वासुदेवस्तुतिमात्त, खों नम इति दादश्यमकैः ॥३६॥३७॥३८॥ ॥ ३८॥ ४९॥ ४९॥ ४२॥ ४३॥ ४५॥ ४६॥ ४७॥

१ बहीकां सयूरिपक्कानाम् खापीडः मुकुटः तेनाभिरासाय सक्ष्पेकापि रामाभि रासाय इति नारायकप्रकीतोऽर्थः।

२ रामाय बलदेवखरूपाय रति जीवगीखामिप्रणीतोऽर्थः।

रमामानसहंसाय गोविन्दाय नमो नमः॥ ३८॥ कंसवंग्रविनाग्राय केश्रिचाणुरघातिने। वृषभध्वजवन्द्याय पार्थसारयये नमः॥ ४०॥ वेणुवादनशीलाय गोपालायाचिमर्दिने(१)। काचिन्दीकूचचोचाय चोचकुण्डचधारिणे(^१)॥ ४१ ॥ वज्जवीवदनाभोजमालिने(१) नृत्यशालिने। नमः प्रणतपालाय श्रीक्रष्णाय नमो नमः ॥ ४२ ॥ नमः पापप्रणाशाय गोवईनधराय च । पूतनाजीवितान्ताय त्रणावर्त्तासुचारिणे॥ ४३॥ निष्कलाय(^४) बिमोच्चाय ग्रुड्डायाग्रुड्डवैरिणे। ऋदितीयाय महते श्रीक्षणाय नमी नमः॥ ४४॥ प्रसीद परमानन्द प्रसीद परमेश्वर। त्राधिव्याधिभुजङ्गेन दष्टं मामुद्दर प्रभो ॥ ४५ ॥ श्रीकृष्ण रुक्तिणीकान्त गोपीजनमनोचर।

१ चिचिमर्दिने कालियदर्पदलनाय इति नारायणप्रणीतोऽर्थः।

२ जोजकुष्डजवज्गवे इति जीवगोखामिससातः पाटः। जोजाभ्यां कुष्डज्ञाभ्यां वस्राव स्वतिमनोद्वराय इति तैर्वाख्यातः।

रु वज्ञवीनयनाभोजमास्त्रिन **इति घ, चिक्रितपुस्रक्रपाठः।**

४ निष्कालाय मायातीताय यहा निष्कां बच्चोभवषं खातीति नसी इति जीवगोसामि-प्रकीतोऽयः।

संसारसागरे मग्नं मामुद्दर जगद्गरो॥ ४६॥ क्रेग्रव क्रेग्रचरण नारायण जनार्दन।
गोविन्द परमानन्द मां समुद्दर माधव॥४०॥ अथैवं स्तिनिस्तराधयामि यथा यूयं(१)तथा पच्चपदं जपन्तः श्रीकृष्णं ध्यायन्तः संस्तिं तरिष्ययेति सोवाच सैरण्यः॥४८॥ अमुं पच्चपदं मन्त्रमावर्त्तयेत् यः स्यात्यनायासतः क्रेवसं तत् पदं तत्। अनेजदेकं मनसो जवीयो नैतहेवा(१) आप्नवन् पर्व्वमर्ग्रदिति॥ ४८॥

अया चं स्तृतिभिराराधयामि भगवनं मन्त्रप्रदित्तिसङ्घर्षेमित्या चः, स्वयेविमिति। 'अय' अस्मिन् तुरुऽपि, 'एवं पूर्वे क्ताभिः, 'स्तृतिभः, 'अचं परमेश्वरं 'यथा,' 'आराधयामि', 'पञ्चपदं जपन्तः', 'यूयं,' 'तथा' तेन प्रकारे या, 'श्रीकृष्णं ध्यायन्तः,' 'संस्तृतं' संसारसमुद्रं, 'तरिष्यथ,' 'इति,' च्चिरण्यजः अस्मा, मुनीन् प्रति 'उवाच', इत्यर्थः ॥ ८८॥

खय दयावती श्रुतिरसान् प्रत्या ह । 'खमुं' वासुरेवात्मकं, 'पश्चपदं मन्त्रम्', 'खावर्त्तयेत्', 'सः', 'खनायासतः,' 'केवलं' श्रदं, 'तत्' वासु-देवाख्यं, 'तत्' प्रसिद्धं, 'पदं', 'याति' । उत्तं पदं नन्ते ॥ विश्वदयित । एजनं कम्पनं खावस्थानप्रचुतिः, तद्वर्जितं सर्व्यदेव एकरूपमित्यर्थः । तथा सर्व्यभूतेषु 'एकं' । मनसो जवीय इति । 'मनसः', खपि वेगवत्तरम् । 'एतत्'पदं, 'देवाः' खोतनकरणाः चत्तुरादीन्द्रियाणि, 'न' 'खाप्नवन्' न

१ अथ चैवं सुतिभिराराधयामि ते यूयं तथेति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः। १ जनीयो नैमदेवा इति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः।

तसात् क्षण एव परो देवसं ध्यायेत्तं रसयेत्तं यजेत्तं भजेदिति ग्रें। तत् सदिति ॥ ५०॥ पूर्व्वतापनो श्रोक्षणोप-निषत् समाप्ता(१)॥

प्राप्तवन्तः। चन्त्रादिप्रवन्तर्मनीयापारपूर्व्यकलात् 'मनसः' अपि 'जवीयः' न तचन्त्रादिग्रम्यम् इत्यर्थः। मनसोऽपिजवीयस्वे चेतुमाचः, पूर्व्यमर्थः दिति। न्यसमात्रात् ब्रह्मसोकादिकं सङ्ख्ययतः मनसः अवभासकं सान्ति मनसोऽपि 'पूर्वं,' ब्रह्मसोकादिकं प्रति 'अर्थत्' प्राप्तं, खोमवत् व्यापित्वात् इत्यर्थः। 'इति' शब्दो मन्त्रसमात्यर्थः॥ ८८॥

चतः सर्वेत्तिष्टलात् धानरसनमजनान्यस्वैव कर्त्तं चानि इत्युप-संइरित । 'तस्नात्' चिवजुप्तिविदेकरसत्वात्, 'क्षण्ण एष परो देवः,''तं', 'धायेत्' चिन्तयेत्, 'तं रसयेत्' तं जपेत्, 'तं भजेत्' प्रमपूर्वकमाराध्येत् । कीट्यम्, 'चों तत् सत्'प्रब्दजयप्रतिपाद्यम् इत्यर्थः। 'इति'प्रब्दः पूर्वे-तापनीसमास्यर्थः । तद्कां गीतायां भगवता । "चों तत् सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः" ॥५०॥ इति श्रीमदिश्वेश्वरविर्णितायां गोपाल-तापनीटीकायां गोपीनायस्य धानरसनभजननिरूपणं नाम पूर्वतापनी-योपनिषट्टीका समाप्ता ॥

१ रसे सं अञ्चेतं अञ्चेदित्यां तत् सदिति । इति अध्यवेवेदे गोपालपूर्वतापनीयोपनिषत् समाप्ता । इति घ, चिक्रितपुस्तकपाटः । तं अञेदिति दिविक्तः समाप्तार्था इति नारायकप्रकीतोऽर्थः । रसेत् की त्रेयेत् रसयेदिति पाठे तनाधुर्यम् अस्तादयेदिति जीवगोस्तानियास्त्रा ।

गोपालतापन्यां

उत्तरभागः।

एकदा चि व्रजस्तियः सकामाः प्रविरोमुपित्वा सर्वेश्वरं गोपानं क्रष्णमूचिरे^(१) उवाच ताः क्रष्णः॥ १॥ ऋनु कसौ ब्राह्मणाय भच्छं दातव्यं भवति दुर्वाससेति॥ २॥

कयं यास्यामोऽतीत्त्वी जलं यमुनाया यतः श्रेयो भवति॥३॥
पूर्वतापत्यां गोपीनायस्य धानरसनभजनेः सनिश्रव्यचित्तस्य वासुदेव एव मौचदो नात्य इति दर्धायतुं तस्य कर्जुमकर्जुमन्यथाकर्जुमैश्र्यंप्रख्यापिकामाख्यायिकां बोधसौकर्यार्थमारचयित, एकदाद्दीति।
'एकदा' एकसिन् काले, 'व्रजस्तियः' गोपिकाः, 'सकामाः,' 'प्रविरी'
रात्रीं, 'क्रब्धं,' प्रति वद्यमायामधं 'ऊचिरे', सिवधी 'उधिला'।
'सर्वेश्वरम्', इति व्हिसं हादिखाद्यचर्यमुत्तं। 'गोपालम्', इति वत्तदेवखाद्यचर्यं। क्रब्यमिति। 'क्रब्यं', प्रति वद्यमायामर्थम् 'ऊचिरे', 'क्रब्यः',
च 'ताः', प्रति वद्यमायामर्थम् 'उवाच', इत्यर्थः॥१॥

सामान्यत चाख्याधिकां सूचियला विशेषतक्तां दर्शियथन् चादी स्त्रीणां वचनमाइ, चनु कसी इति। 'चनु कसी बाद्याणाय' कं बाद्याण-मनुष्वितिष्य, 'भव्यं दात्यं भवति', वेन मनःस्थिताः कामाः पूर्णा भवन्तीति शेषः। स्वावचनमाइ। 'दुर्वाससे,' दात्यमिति शेषः। स्वान्दसलासिकः। २॥

पुनः स्त्रीयां वाक्यं, कथमिति । 'यमुनायाः' 'जलं,' खच्चोस्यं 'खतीलां' 'कचं', तं मुनिं 'यास्थामः' । 'यतः' मुनेः सकाग्रात्,'फ्रेयो भवति' ॥ ३॥

१ क्रम्णं चिता जिचरे इति घ, चिक्रितपुसकपाटः। एतस्य ता गोयः जिचरे जचुरित्ययो नारायकप्रकोतः।

क्रष्णेति ब्रह्मचारीत्युक्ता मार्गं वो दास्यति (१) यं मां स्मृत्वा ऋगाधा गाधा भवति यं मां स्मृत्वा ऋपूतः पूतो भवति यं मां स्मृत्वा ऋवती ब्रती भवति यं मां स्मृत्वा सकामो निष्कामो भवति यं मां स्मृत्वाऽश्रोचियः श्रोचियो भवति ॥४॥

श्रुत्वा तदाचं चि वै रै। इं स्मृत्वा तदाक्येन तीर्त्वा तां सीयें। (१) चि गत्वाऽऽश्रमं पुष्यतमं चि नत्वा मुनिं श्रेष्ठतमं चि वै रै। इ-चिति ॥ ५॥

चय श्रीकृष्णवाकां, कृष्णिचादि। 'कृष्ण इति,' नाम यः सः 'ब्रह्मचा-रीति,' वाकां यमुनामधे 'उक्का', वजन्तु, 'वः' युग्नाकां, यमुना 'मार्धं', 'दास्यति'। कृष्णित, कृान्दसत्वात्सिः।

हाधोत्युक्तिमात्रेण कर्य यमुना मार्ग नो दास्यति कथं चानेकाङ्कनास-म्नोगणीको ब्रह्मचारी स्थादिति प्रङ्कात्युदक्तये स्वस्मृतिमिहिमानमाह, यं मां स्मृत्वा खगाधा तत्तस्पर्धरिहताऽपि सर्व्या सरित् गाधा भवति यं मां स्मृत्वा खपूतः पूतो भवति यं मां स्मृत्वाऽब्रतो वती भवति(१) यं मां स्मृत्वा सकामो निम्कामो भवति यं मां स्मृत्वाऽब्रोतियः श्रोतियो भवति इति। स्पद्धार्थमिदं॥ ॥

श्रुला तदाचं चीति। ता: गोप्प: 'दि' निश्चिनं, 'वै' सार्यते, तस्य,

१ यदि व जत्तानतेच्हा तद्युं ताना भवति इति घ, चिक्रितपुसकेऽधिकः पाठः।

२ तद्दाक्येन तीर्का तत् सीर्य्यामिति ख, ग, इ, चिक्रितपुस्तकवयपाठः, जीव-गोसामिसमातः।

२ अवती त्रसाचर्थादिश्रुतिस्नृत्युक्तवतरिस्तोऽपि वती चीर्णवती भवति इति नारायस्प्रकीतोऽर्थः।

दला ऋसौ ब्राह्मणाय चीरमयं घृतमयिमष्टतमं(१) चि वै ॥६॥ मिष्टतमं चि वै तु भुक्का चिलाऽऽभिषं प्रयोज्यान्वाज्ञां लदात्(१) कथं याखामोऽतीर्ला सौर्याम्॥ ७॥

'वाचं,' 'श्रुला', सामर्थां बोधकवाकोन प्रोत्साहिताः, गन्तखतया 'रै। इं' बहां ग्रं दुर्वाससं, 'स्मृला', 'तदाक्येन' क्याों ब्रह्मचारीत्येवं रूपेण वाक्येन, 'तत्' 'सौर्यां' 'हि', 'तां' खगाधामि गाधामूतां सौर्यां सूर्यतनयां यमुनां, 'तीर्ला' 'गला खाश्रमं पुर्ण्यतमं हि,' 'नला,' 'मुनिं' दुर्वाससं, कीट्यं, 'श्रेष्ठतमं,' 'वै' प्रसिद्धं, 'रे। इं' उत्तार्थम्, 'इति'ग्र दो भाजनपूर्वपरि- चरणसमात्यर्थं: ॥ ५ ॥

'दला', 'खसों,' 'ब्राह्मणाय' दुर्वाससे, 'चीरमयं' पायसाम्नम्,'इन्छतमं हि वे' हिततमं मिन्छतमं खादुतमं, 'हि वे' प्रसिद्धं, ईटग्रामम् दला खाराध्यामासुरिति भेष: ॥ ६ ॥

स तु खासां से हेन 'भुका,' उच्चिष्टमन्न 'हिला' त्यका उच्चिष्ट-भागिस्वो दला, 'खाग्निषं', 'पृयोच्य' दला, 'खनु' पसात्, 'खाद्यां' गमनानुद्यां, 'खदात्'। ता जचुः, 'क्षयं यास्यामोऽतीर्त्तां सौर्यां'॥ ७॥

१ प्रतमधं मिष्टतमिति घ, चिक्कितपुर्खकपाठः। **चस्य प्रतमयं प्रतिवकारं** मिष्टतमम् चतिग्रयेन मिष्टं मधुरमिति नारायणप्रणीतोऽर्थः।

२ इष्टतमः च हि वै तुष्टः स्नाला भुक्काशिषं प्रयोज्याचां लदात्। दित घ,चिक्रित-पुस्तकपाठः। एतस्य इष्टतमः प्रियतमः दर्शनीयतमः च मुनिः हि वै तुष्टः तुष्टमनाः स्नाला स्नानं कला भुक्का भोजनं कला चाशिषं चिरजीवितादिक्षपं प्रयोज्य गदिला चाचां तु गमनायादात् दत्तवानित्ययो नारायणप्रणीतः। मिष्टतमं च हि वै तुष्टः मुाला-भुक्लाहिलाशिषं प्रयोज्यान्वः चां लदात् दित ख,चिक्रितपुस्तकपाठः। द्ष्टतमः च हि वे तुष्टः मुाला भुक्का हिलाशिषं प्रयोज्यान्वः चां लदास्दित छ, चिक्रितपुस्तकपाठः।

स चोवाच मुनिः, दूर्वाभिनं^(१) मां स्नृत्वा वो दास्यतीति मार्गम् ॥ ८ ॥

तासां मध्ये चि श्रेष्ठा गान्धर्वी त्युवाच तं चि वै ताभिरेवं (९) विचार्य ॥ ८॥

कथं क्रम्हो ब्रह्मचारी कथं दूर्वाश्रनो मुनिः ॥ १० ॥ तां चि मुख्यां विधाय पूर्वमनु क्रत्वा तृष्हीमासः॥ १९ ॥ शब्दवानाकाशः॥ १२ ॥

'सहोवाच मुनिः,''मां','टूर्वाशिनं' टूर्वाभो जिनं,टूर्वेव खशनमखास्ति तं, निराहारं, वा,'स्नृता,''वः' युश्वाकं, यमुना 'मार्गः','दाखतीति'॥ प ॥ 'तासां मधे हि श्रेष्ठा,' 'गाकवीं,'(ह) काचित् 'तं' 'हि वे', दुर्वाससम्। 'रवम्' 'उवाच'। किं कता, 'तामिः' खन्याभिः स्त्रीभिः,समं,'विचार्य'॥८॥

किमुवाचेता ह । 'कथं क्षव्यो ब्रह्मवारी 'कथं', च 'मुनि:'दूर्वाश्रनः', रवम्वाचेति सम्बन्धः ॥१०॥

खन्यास्तु निं चकुरित्याग्रङ्काम्, तां द्वीति। 'तां' गासवीं, 'मुखां विधाय' मुख्यचापारयन्तीं क्रता, 'चनु' पश्चात्, 'पूर्व'' 'क्रता' चग्नेसरीं विधाय, चन्याः स्त्रियः 'तू श्रीमासः' चनुरक्तवत्यः तस्युः॥ ११॥

भूतभौतिकाद्यन्तर्यामिण स्थातमनोऽिक्रयलात्सर्विमिदं क्या ब्रह्मचारी-त्यादिकं युक्तत स्वेत्यभिपृत्य भगवान् मृनिराह्न, प्रब्दवानिति ॥ १२॥

१ दूर्वा क्रिनमुपना सिनमिति घ चिक्रितप् खकपाठः।

२ गान्धवी द्यावाच तं चि वै ताभिरेविमिति छ, चिक्रितपुसकपाठः।

२ गम्ब लोकादामत्यावतीणा मामवी गोपी इति नारायणप्रणीतीऽर्थः।

ग्रब्दाकाशाभ्यां भिन्नसिक्षन्नाकाशे तिष्ठति स द्याकाशसं न वेद स द्यात्माऽ चं कयं भोक्ता भवामि स्पर्शवान् वायुः स्पर्श-वायुभ्यां भिन्नसिक्षन् वायौ तिष्ठति वायुर्न्न वेद तं दि स द्या-तमाऽ चं कयं भोक्ता भवामि रूपविददं दि तेजो रूपाभियां भिन्नसिक्षन्नशौ तिष्ठति त्रिभिन वेद तं दि स द्यात्माऽ चं कथं भोक्ता भवामि रसवत्य त्र्रापो(१) रसाद् भिन्नसाखस्, तिष्ठतितं द्यापो न विदुः स द्यात्माऽ चं(१) कथं भोक्ता भवामि गन्धवतीयं भ्रमिगन्धभूमिभ्यां भिन्नसिस्यां भूमौ तिष्ठति भूमिन वेद तं दि स द्यात्माऽ चं कथं भोक्ता भवामि ॥ १२॥

म्बद्गुमयुक्तः 'काकामः', वर्तते, तदुभय'भिक्तः' विलक्षमः पृत्य-गात्मा, 'तिस्निन्' मन्द्वित, 'काकामः,' 'तिरुति'। स हीति। मन्द-वान् खिप 'आकामः,''तम्' अन्तर्यामिमां, 'न वेद', मय्यसौ तिरुतीति(१)। सन्चात्मेति। 'सः' 'हि', सान्तीभूतः, 'आत्मा,' 'अहं,' 'कणं भोका भवामि'। रवं वायुतेजोजनभू मिप्याया द्याख्याः॥ १२॥

¥

१ रसवत्य चाप इति चपामप्लेन श्कलेऽपि सरित्समुद्रादिभेदेनानेकलादाप इति बक्रवचनम्। सभावतः केचित् अच्दा चवयवसङ्क्याकेवाददते यथा दाराः सिकता इति मारायणः।

१ रसवत्य आपो रसाङ्ग्रो भिन्नसाखप्सु तिष्ठति आपो न विदुसं दि स श्वामाऽद-मिति घ, चिक्रितप्सकपाटः।

२ अर्वेच तिष्ठतीति प्रथमपुरवः चाताभिप्रायेच, भवामीत्युत्तमपुरविश्विप्रायेच् इति नारायचः।

इदं चि मनस्तेष्वेवं चि मनुते ॥१३॥ तानिदं चि गृक्षाति(१)॥१४॥

यत्र सर्वमात्मैवास्त् तत्र वा कुत्र मनुते का वा गच्छतीति स ज्ञातमा कथं(१) भोक्ता भवामि ॥ १५॥

क्यं ति ने भोक्ताऽ चं प्रव्दं प्रकीमीत्यादिपृत्यय इत्याप्रक्षत्र मनस यव तथा पृतीतिरित्या च, इदं चि मन इति । 'तेषु' चाका प्रादिषु, वर्षमानम् 'इदं', 'चि' पृसिद्धं, 'मनः', 'यवं चि' चाचं भौता इत्येवं चि, 'मन्ते', चित्रसिद्यानात् ॥१३॥

स्वत्र हेतुमाइ, तानिति। 'हि' यसात्, 'तान्' ग्रव्दादीन्, 'इदं' मनः एव, तत्तदिन्त्रियाधिष्ठात्रभूतं, 'ग्रङ्गाति'॥ १८॥

यवं तर्षि तवापि जोकवरनः करणविष्य ज्ञलाद सं भोक्षेत्रधासः सादित्या ग्रञ्ज विद्या प्रविद्या प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्रविद्य प्

१ तानिदं स्टकातीति घ, चिकितपुचकपाठः ।

२ स द्यासाऽचं कथमिति घ, चिक्रितपुर्वकपाठः ।

श्रयं हि क्रम्णो यो वो हि प्रेष्ठः श्ररीरद्वयकारणं भवति ॥१६॥ दौ सुपर्णा भवतो ब्रह्मणाऽंश्रधृतस्तयेतरो भोक्ता भवति श्रन्यो हि साची भवतीति(१)॥१०॥

वृचधर्मे तौ तिष्ठतः ऋतो भोक्ताऽभोक्तारौ (१) ॥१८॥
पूर्वे। चि भोक्ता भवति तथेतरोऽभोक्ता कृष्णो भवतोति॥१८॥

चन्तु तव चानितादभोकृतं क्राचोऽपि कि तचैवेत्याच्यात्र तस्य तु चर्चाधिष्ठानभूतताज्ञभोकृत्वमित्याच, चयं चीति। 'यो वः','प्रेष्ठः,''चावं' 'क्राचाः,' 'चि' यसात्,'ग्ररीर'दयस्य 'कार्यां' तती न भवतीति ग्रेषः ॥१ ६॥

एवमिछानलादभोतृत्वमित्युत्तम्, खथान्तर्यामित्वादिष तदाइ, दी सुपर्वावित । 'अस्रावाः' चिन्नात्रात्, 'दी' 'सपर्वा', इव सहचरी जीवेश्वरी, 'भवतः' वर्त्तते । 'तथा' भूतयोत्तयोर्मध्ये 'इतरः,' 'खंग्रभूतः' जीवः, 'भोता,' 'भवति,' 'हि' निश्चितं, 'खन्यः' ईश्वरः, 'साच्ची' केवचनी- चित्तेव, 'भवति' इत्यर्थः । 'इति' गृब्दो मन्त्रसमात्र्यः ॥ १७॥

तयो: सुपर्णतं कृत इत्याग्रङ्क रखे वर्त्तमानत्वादित्याह, रखधेमें ताविति। रख्यस्य धर्मे। त्रखनाखो यस्य तित्रान् 'रखधर्मे' विनाग्रिनि संसाराखे अश्वत्ये, 'तिस्रतः'। खत इति। 'खतः' ईश्वरानीश्वरत्वात्, तौ 'भोताऽभोतारौ'(१)॥१८॥

रतिहिवनिता। 'पूर्वो हि भोता भवति,' 'तथा', 'इतरः', 'ख्रवाः' देश्वरः, 'इति' कारणात्, 'अभीता', 'भवति'॥ १९॥

१ साची भवतीति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः।

९ दृचधर्को तो तिष्ठतः चभोक्नुभोक्ताराविति व,चिक्रितपुस्तकपाढः,नारायसाभिप्रेतः। ६ भोक्ताभोक्ताराविति बान्दसमिति जीवगोसामिभियक्तम्।

यत्र विद्याऽविद्ये न विदामो विद्याऽविद्याभ्यां भिन्नः, विद्यामयो हि यः(१) स कथं विषयीभवतीति ॥ २०॥ यो ह वै(१) कामेन कामान् कामयते स कामी भवति यो ह वै लकामेन कामान् कामयते सोऽकामी भवति ॥२१॥ जन्मजराभ्यां भिन्नः स्थाणुरयमच्हेद्योऽयं योऽसी सौर्यं ति-

ईश्वरस्थाभोतृत्वे स्वविद्यारिहतत्वं हेतुमाह । 'यत्र' ईश्वरे,' 'विद्याऽविद्यास्यां,''भिन्नः', घटादिवद् विषयः, न भवतीत्यर्थः । विद्याविष-यत्वाभावे हेतुमाह, विद्यामया हीति । 'विद्या' नाम ब्रह्माकारा स्थनः-करसादिकाः, तन्मयः' तत्पुकासकः, 'हि यः स क्यं विषयी भवति'। न हि घटादिपुकासक सालोको घटादिविषयः ॥ २०॥

रवमिवदार हितलाद भोकृत्वमुक्तम्, खणाकामलाद भोकृत्वमाह, यो हित। 'यः', 'ह', 'वै' किल, 'कामेन' इच्छ्या, 'कामान्' विषयान्, 'कामयते', 'सः,' 'कामी' कामुकः, 'भवित'। 'यः' 'ह वै', क्रवाः, 'तु,' 'खकामेन' द्यानच्छ्या, 'कामान्', खीकरोति, 'सः,'तु 'खकामी,' खोके पृसिदः 'भवित'॥ २१॥

रवमकामिलादभोत्नृत्तम्, खय षडूर्मिभाविकारग्रून्यलात् क्वत्याग्रब्दार्थत्वादिष तदाच, जन्मेति। 'जन्मजराभ्यां,' 'भिन्नः' रिहतः, इत्यनेन यडूर्मिरिहतलं जन्माख्यप्रयमिकाररिहतलम् 'ख्यागुः' सर्वदा स्थिरः, इत्यनेन किश्चित्कासास्तिलविपरिणामाभ्यां ग्रून्यलं

१ विद्यासयो य इति घ, चिक्रितपुस्रकपाठः।

ए यो सि वै इति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः।

ष्ठित^(१) योऽसी गोषु तिष्ठित योऽसी गाः पालयित^(१) योऽसी गोपेषु तिष्ठित योऽसी सर्वेषु वेदेषु^(१) तिष्ठित योऽसी सर्वेवेदे-गीयते योऽसी सर्वेषु भ्रतेषाविष्य भ्रतानि^(१) विद्धाति स वो चि खामी योऽसी भवति॥ २२॥

विनाममून्यत्व होतं भवति । अच्छे हो उपिति अपचयमून्यत्व निहति चम् । क्षयस्तायामितिधातु बलादयं क्षयाम् व्याम् इति स्थायाम् विधातु बलादयं क्षयाम् व्याम् इति स्थायाम् विधातु बलादयं क्षयाम् व्याम् इति स्थायाम् विधात् निहति इति । 'योऽसी', गोम्रव्यार्थभूते सूर्यम् के विद्यते तिष्ठति, स्य गोविन्दः, स रवाधुना कामधेन नुग्रदायं धेनुषु विद्यते तिष्ठतिति गोविन्दम् व्याप्याम् गोम्रव्देन गोपाः ते च गा इन्द्रियाया पालयन्तीति खुत्पस्था, गोपेषु विद्यते तिष्ठतीति गोविन्दम् व्याप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् ते प्रवात्याम् पालयन्तीति खुत्पस्था, गोपेषु विद्यते तिष्ठतीति गोविन्दम् व्याप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम् स्थाप्याम स्थाप्य स्थाप्य स्थाप्याम स्थाप्य स्थाप्य स्थाप्य स्

१ सूर्यों तिष्ठति इति घ, चिक्नितपुस्तकपाठः, एतस्य सूर्यो सूर्यमस्बस्ते इत्यर्थः नारायसङ्गतः।

१ योऽभी मीपान् पालयति इति घ, चिक्रितपुखनपाठः।

१ सर्वेषु देवेषु इति घ, चिक्रितपुलकपाटः, अस्य सर्वेषु मुद्धाासिष्ठात्स्विप देवेषु इत्यर्थे। नारायकप्रकीतः।

ध भूतेष् च।विय्य तिष्ठति भूतानि इति घ, चिक्रितप्सकपाठः।

सा चोवाच गान्धर्वी कयं वाऽसास जातोऽसौ गोपाकः कयं वा जातोऽसौ त्वया मुने क्षण्यः को वाऽस्य मन्त्रः किं वाऽस्य स्थानं कयं वा देवक्यां जातः को वाऽस्य ज्यायान् रामो भवति कीहशी पूजाऽस्य गोपाकस्य भवति साचात् प्रकृतिपरो योऽयमात्मा गोपाकः कथं त्ववतोणीं भ्रम्यां चि वै स चोवाच तां च वै ॥२३॥ एको च वै(९) पूर्वं नारायणो देवः ॥२४॥

माइ, स वा होति। 'सः' कृष्णः गौविन्दः, यत् 'वः,' 'खामी,' तस्मात् स्रभाक्तेत्वर्थः ॥ २२ ॥

एवं विदितहत्तान्ता गासवीं पृच्कतीत्या इसा इविति। 'सा' गासवीं,(१) मृनिम् 'उवाच'। किम् इत्यामङ्गाइ, कथिमित। एवं विधः क्या गोविन्दः 'सत्यास', 'गोपाकः,' 'कणं वा,' 'जातः,' 'कणं वा', हे 'मृने,' असी', 'क्रवाः', 'त्वया,' 'ज्ञातः,' 'की वा,' 'स्रस्य मन्नः,' 'किंवाऽस्यस्थानं', 'कणंवा देवक्यां जातः,' 'अस्य,' 'क्यायान्' क्येष्ठः, 'रामः,' 'की वा' किंह्यादिः, 'भवित', हत्यर्थः। 'की ह्यी,' 'पूजा,' 'अस्य,' 'गोपाकस्य,' 'भवित', 'साचात् प्रकृतिपरः' मायेषः, 'यः' परमात्मा, 'गोपाकः', 'कणं त्वतीर्यः,' 'भूम्यां', 'हि,' वे' प्रसिद्धं, 'सहोवाच तांह वे' एकी हिति 'सः' मृनिः, 'ह' किस, 'वे'प्रसिद्धं, 'तां'गास्थ्वींम्, 'उवाच'॥ २३॥

प्रश्नोत्तरमभी क्राव्यावस्थाः कथामवतार्थितुं क्राव्याखरूपमाच् । 'एकः,' 'इ'किस, 'पूर्व्व' स्टेरादौ, 'नारायको देवः,' खासीत् इतिग्रेषः ॥२॥

१ एको चिने इति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः। २ गामनी राषा इति जीवगोसामिभिदक्तमः।

यिसन् जोका चोतास प्रोतास तस्य इत्पद्माज्जातोऽज-योनिस्तिपित्वा(१) तसी हि वरं ददौ॥ २५॥

स कामप्रश्नमेव वज्ञे तं चासौ ददौ ॥ २६ ॥

स होवाचाङायोनियोऽवताराणां मध्ये श्रेष्ठोऽवतारः को भवति येन लोकास्तुष्टा देवास्तुष्टा भवन्ति (१) यं सृत्वा मुक्ता श्रसात् संसारात् भवन्ति कथं वाऽस्थावतारस्य ब्रह्मता भवति ॥ २०॥

नारायणालं तस्य कुत इत्यत चाइ, यसिजिति। 'यसिन्' देवे, 'कोकाः', 'कोताः', दीर्घतन्तुषु पटवत्, 'प्रोताः', तिर्व्यक्तन्तुषु पटवत्, 'तस्य इत्पद्माक्कातोऽक्वयोनिः', 'तिप्तता,'(रे) स्थिताय 'तसीं' अध्यो, नारायणः 'वरं ददी'॥ २५॥

स इति । 'सः'ब्रह्मा, 'कामप्रश्रम्' इच्छ्या प्रश्रम्, 'रव,' वरं 'वने,'(४) 'तं इस्मि ददी' ॥ २६ ॥

स हिति। सञ्चवरः 'स्रक्रयो निः', नारायक्यम् 'उवाच', योऽवतारा-क्यामिति। हे विश्वात्रय वव 'स्रवताराकां मध्ये', 'यः', 'श्रेष्ठोऽवतारः', सः 'को भवति'। येनेति। 'येन' स्रवतारेक हेतुना, 'लोकास्तुष्टाः',

१ चाडायोनिः स पिता इति घ, चिक्रितपुरुकपाडः, चस्त्र स पिता नारायक् इति नारायक्षाः ।

९ स द्वीवाचाक्कयोनिरवत्ताराक्षां मध्ये श्रेष्ठीः वतारः को भविता येन स्रोकाः श्रेष्ठा अवन्ति इति व, चिक्रितपुस्तकवाटः।

[.] १ मदिला चालानं प्रकास दति जीवगोखामिचाखा।

ध कामप्रमं वन्ने यद्षं प्रकासि तस्रोत्तरं देवीति ययाचे दति जीवने।सामिषास्ता ।

स द्वीवाच तं दि नारायणी देवः सकाम्या मेरोः प्रट्रक्ने (१) यथा सप्त पुर्थो भवन्ति तथा निष्काम्याः सकाम्या भूगोलचको सप्त पुर्थो भवन्ति तासां मध्ये साचात् ब्रह्म गोपालपुरी द्वीति ॥ २८॥

सकाम्या निष्काम्या देवानां सर्वेषां भूतानां भविति । यथा चि वै सरिस पद्मं तिष्ठति तथा भूम्यां तिष्ठतीति चक्रेण रचिता चि

'देवास्तुष्टा भवन्ति,''यं स्मृता मृता बस्मात् संसारात् भवन्ति'। 'क्यं वा', 'बस्य' श्रेष्ठस्य, 'बवतारस्य', 'ब्रह्म'खरूपता 'भवति' वर्त्तते ॥ २७ ॥

'स होवाच तंहि नारायबो देवः'। किम्। 'सकाम्याः' कामफलेन सहिताः, 'मेरोः ग्रहक्के', 'यथा सप्त पुर्व्यो भवन्ति,' 'तथा', 'निब्काम्याः' मोच्चदाः, 'सकाम्याः' कामफलदाः, अधिकारितारतम्यन 'भूगोलचके,' 'सप्त पुर्व्यः' चयौध्यामध्यादयः, 'भवन्ति', 'तासां' पुरीबां, 'मध्ये,' गोपालपुरी' गोपालवेशस्य विद्याराष्ट्रयमूता पुरी, यदा गवां चकेब पालिता 'गोपालपुरी' मध्या, 'हि' निचित्त, 'साच्चात् ब्रह्म,'भवति, ब्रह्मप्रकाशकाल्यात् ॥ २०॥

'सकाम्या', 'निष्काम्या', 'देवानां', 'सर्वे वां,' 'भूतानां',च यथाभजनं 'भवति,''यथा', 'सरसि,' 'पद्म', 'तिष्ठति', 'तथा', 'भूम्यां', ग्रीपाचपुरी

९ चकाम्यामृते मेरोःशृङे इति घ, चिक्कितपुस्रकपाडः।

२ चकाम्याच भूतानां भविन यथा चि वै सरिस पद्मं तिष्ठति तथा भूम्यां तिष्ठकीति तथा साचाद् त्रद्ध गोपालपुरी चि निष्याम्या सकाम्या च भतानां भवित इति घ, चिक्रित-पु जकप:डः ।

मथुरा(१) तसार् गोपाचपुरी भवति(१) ॥ २८ ॥

वृद्द् वृद्धदनं मधोर्मधुवनं तालसालवनं काम्यं काम्यवनं वज्जलो वज्जलवनं कुमुदं कुमुदवनं खदिरः खदिरवनं भद्रो भद्रवनं भाषडीर इति भाषडीरवनं श्रीवनं लोचवनं (१) वृन्दाया वृन्दावनमेतेरावृता पुरो भवति ॥ ३०॥

'तिष्ठति' 'इति' गोपानपुरीत्यस्य युत्पत्तिं वदन् सर्व्वसिदसज्ज्ञां दर्भयति । 'चक्रेण रिच्चता हि मघुरा,''तसाद्गोपानपुरी भवति'॥२८॥

सा च मथुरा दादभवनैराखता भवतीत्या ह, वहदिति। 'खहत्' महद्गतम्, इति कारणात् 'खहदनम्,' एकं(१)। 'मधोः' दैत्यस्य, सम्बन्धि इतिकारणात् 'मधुवनं,' दितीयं(२)। 'ताखः', वर्कत इतिकारणात् 'ताखवनं,' त्यतीयं (३)। 'कामंग' कामदेवः, वर्कत इति 'कामयवनं,' चतुंषं (४)। 'कडखः,' वर्कत इति(४) 'कडखवनं,' पश्चमं (५)। 'कुमुदं', वर्कत इतिकारणात् 'कुमुदवनं,' षष्ठं (६)। 'खदिरः,' वर्कत इति-कारणात् 'खदिरवनं,' सप्तमं (७)। 'भदः' खद्यविशेषः, वर्कत इति-कारणात् 'भदवनं,' अद्यमं (८)। 'भाष्ठीरः' 'इति' नाम वटः, वर्कत

१ चक्रोण रचिता चिषे मथुरा इति घ,चिक्कितपुखकपाटः । एतस्य चक्रोण वैय्यावेन सुदर्शनेन रचिता पालिता इत्येथा नारायणप्रणीतः।

२ तस्त्राद् गोपासपुरी हि भवतीति घ,चिक्रितपुसकपाठः।

६ भद्रो भद्रवनं त्रीः त्रीवनं भाष्डीर इति भाष्डीरवनं लोहो ले। इवनिमिति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः।

४ वक्रला श्रीहरेः पत्नी सा यनासीति स्रश्रीदेखात् वक्रलः, इति जीवगास्तामि-काका।

५ भद्री बलभदः खेलित यन इति भद्रवनिमिति जीवगाखामी।

तत्र तेष्ठेव गद्दनेष्ठेव देवा मनुष्या गन्धर्वा नागाः किन्नरा गायन्तीति नृत्यन्तीति॥ ३१॥

तत्र दादशादित्या एकादश स्ट्रा ऋषी वसवः सप्त मुनयो ब्रह्मा नारदश्च पन्च विनायका वीरेश्वरो स्ट्रेश्वरो ऋकिकेइतिकारणात् 'भाष्डीरवनं,' नवमं (८)। श्रीः रमा, तस्याः, विस्तिन्
साधकानां श्रीन्नमाविभावात् तदनं 'श्रीवनं,'(१) दश्चमं(१०)। खोदः
नाम कश्चिदसुरः, सः तपसा यत्र सिद्धिं प्राप्तः, तत् 'खोद्यवनं,' एकादश्चं (११)। चन्दायाः, वनं, 'चन्दावनं,' दादश्चं (१२)॥ ३०॥

तत्र तेथेवेति । 'तत्र' मधुरासमीपे, 'तेथेव' दादम्रखपि रवं-विधेषु प्रागुक्तप्रकारेषु, 'गञ्चनेषु,' 'देवाः,' 'मनुष्याः,' 'गन्धर्वाः,' 'नागाः,' 'किन्नराः,' 'इति' पृसिदं, 'गायन्ति,' पृसिदं 'क्रयन्तीति' ॥ ३१ ॥

'तत्र' तेषु द्वादश्रसु स्विप वनेषु द्वादश्रादित्या इति । वर्षाः(१) सूर्यः (२) वेदाङ्गः(३) भानुः(४) इन्द्रः(५) रिवः(६) गभिक्तमान्(७) यमः (८) | विद्याप्रदेताः(१) दिवाकरः(१०) मित्रः(११) विष्णुः(१२) । रकादश्र रुद्रा इति ।

"वीरमद्रख ग्रमुख गिरिग्रख हतीयकः।

अजैकपाद हिन्नधः पिनाकी च तथापरः॥

भुवनाधी श्रद्धेव कपाकी च दिशां पितः।

स्थागुर्भग इति प्रोता कहा रकादशाङ्गुताः॥

स्रहीवसव इति।

"भुवी धरख सीमः स्थादापस्वैवानिकोऽनकः।

प्रस्तूषस्र प्रभावस्र वसवोऽस्टी प्रकीर्त्तिताः"॥

१ श्रीपालवनं श्रीवनिमिति जीवगीलामी।

यरो गणेयरो नीलकण्डेयरो विश्वेयरो गोपालेयरो भद्रे-यरोऽन्यानि लिङ्गानि^(१) चतुर्विंग्रतिर्भवन्ति ॥ ३२॥

दे वने साः क्रष्णवनं भद्रवनं तयोरन्तर्दादग्रवनानि पुण्यानि पुण्यतमानि तेष्वेव देवास्तिष्ठन्ति सिद्धाः सिद्धिं प्राप्ताः॥ ३३॥

> सप्त मुनय इति । काख्यपोऽचिभेरदाजो विश्वामित्रोय गौतमः। जमदमिर्वसिष्ठच सप्तेते मुनयः स्नृताः''॥

'त्रझा,' 'नारदख'। 'पश्च विनायका:', "मोद: (१) प्रमोद: (१) खामोद: (१) समुखः (१) दुर्मुखः (६) तथा'' इति प्रोक्ताः। वीरेश्वरः (१) खन्नेश्वरः (१) खन्नेश्वरः (१) ग्रोपेश्वरः (१) नीचकर्ष्णेश्वरः (६) विश्वेश्वरः (६) ग्रोपेशेश्वरः (७) भन्नेश्वरः (८) इति खर्शे चिद्धानि। तथा 'खन्नानि,' 'चतुर्विंश्वतिचिद्धानि भवन्ति'॥ १२॥

देवने इति। 'देवने,''क्षः'(र) वर्त्तेते, एकं 'क्रमावनं'। दितीयं 'भद्र-वनं,। 'तयोः' दयोर्वनयो,ः 'खन्तः' मध्ये, 'दादण वनानि', भवन्ति। कानिचित् 'पुष्प्रानि,' कानिचित् 'पुष्प्रतमानि,' 'तेषु', समस्तेषु, खिप 'सिद्धाः' जातिविशेषाः,'देवाः', 'तिष्ठन्ति'। कीटशाः सिद्धा देवाः, 'सिद्धिं प्राप्ताः'॥ ३३॥

चात्र हेतुं वद्ग्रेव श्रेष्ठावतारमाह, तत्र हीति। 'हि' यसात्,

१ एतदायानि खिज्ञानि इति घ, चिक्निनपुसकपाठः । एतदायानि एतत्प्रभृतीनि इति नारायकः ।

२ दे वने ख इति भिन्ने दादश्थ इति नारायणः।

तत्र हि रामस्य राममूर्त्तः प्रद्युक्तस्य प्रद्युक्तमूर्त्तः (१) रिनरहस्यानिस्ह्रमूर्त्तः (१) क्रष्णस्य क्रष्णमूर्त्तः (१) ॥ ३४ ॥
वनेष्वेवं मयुरास्तेवं दादम्भूर्त्तयो भवन्ति ॥ ३५ ॥
रकां हि रहा यजन्ति द्वितीयां हि ब्रह्मा यजित त्वितीयां ब्रह्मा यजित त्वितीयां ब्रह्मा यजित त्वितीयां विनायकाः यजित प्रश्नी वसवो यजित सप्तमीस्वयो यजित त्रष्टमीं (तत्र' तेषु, 'रामस्य' वसदेवस्य, 'रामास्या' 'मूर्त्तः' 'प्रदुक्तस्य', 'प्रदक्षास्था' 'मूर्त्तः' 'अनिरुद्धः, 'अनिरुद्धास्था' 'मूर्त्तः' 'क्षष्णस्य,' 'क्षणास्था' 'मूर्त्तः', 'अस्वीत्यर्थः ॥ ३४ ॥

एवस्प्रकाराः तेष्येव 'वनेषु,' तथा एवस्प्रकाराः 'मथुरासु' मथु-राप्रदेशेषु, 'द्वादश्ममूर्त्त्र्यः'। रीही(१) ब्राह्मी(२) देवी(३) मानवी(४) विघुनाशिनी(५) काम्या(६) आर्घो (७) गान्धवी (८) गौः(८) खन्तर्द्धान-स्था(१०) खपरङ्कता(११) मूमिस्था(१२) ॥ ३५॥

दादश्रमूत्तीं नां प्रत्येकमुपासकाना छ । 'यकां(४) दि वहा यजन्ति'। 'दितीयां(५) ब्रह्मा यजति'। 'त्रतीयां',(६) 'ब्रह्मजाः' सनत्कुमारादयः, 'यजन्ति'।'चतुर्थीं,'(९)'मवतः' मबद्गबाः, 'यजन्ति'। 'पश्वमीं(६) विना-

१ प्रक्तष्टं युक्तं द्रविषं यस्यास्तादृष्टी प्रयुक्तस्य मूर्त्तिः दति नारायणः ।

२ न निरुद्धा चनिरुद्धा प्रत्यचारी मूर्ति च इति नारायकः।

२ डब्ला ग्रामा चासी मूर्तिय डब्ल्यमूर्तिः दति नारायकः।

४ एका प्रथमां रामस्यमूर्णि ट्रन्ड्नस्थां बदा बदलोके।

५ दितीयां प्रयुम्बस्य मूर्तिः सधुवनस्थां ब्रह्मा ब्रह्मास्रोके।

६ हतीयामनिर्दम्तिः तालवनस्यां त्रस्ताः सत्यस्तीके।

चतुर्धी क्रम्मार्क्ति काम्यवनस्थां महतो देवा देवस्रोके।

प्रचुमी पुना रोममूर्त्ति बङ्कत्वनस्थां विनायकाः।

गन्धर्वा यजन्ति नवमीमस्ररसो यजन्ति दशमी वै ह्यन्त-इनि तिष्ठति एकादशमेति खपदं गता दादशमेति भ्रम्यां तिष्ठति(९)॥ ३६ ॥

तां चिये यजन्ति ते मृत्युं तरन्ति मुक्तिं सभन्ते।

तत्यू जकानां फाचातिश्रयमाद्य, तां चीति(र)। 'तां' भूमिष्ठां मूर्त्तिं, 'ये

१ दशमी चि दिनो ह्यानद्वां ने तिष्ठति एका दश्यन्तरी चपदंगता द्वादशी तु भूत्यां तिष्ठति इति घ, चिक्रितपु खकपाठः। एतस्य दशमी मूर्त्ता चिं निश्वतं दिवः खर्खां कस्या-नद्वां ने तिष्ठति, श्वनारी चपदम् श्वन्तरी चर्छोकः तंगता प्राप्ता, द्वादशी भूत्यां भूस्रोके, इति नारायक्षप्रकीतोऽर्थः।

९ षष्ठीं पुनः प्रदासमूर्त्तिः कुम्दवनस्थां वसवी यजन्ति ।

र सप्तमी पुनरनिषद्धमूनि खदिरवनस्था ऋषयो यजनित ।

४ **च**ष्टमी पुनः कृष्णमूर्ति भद्रवनस्थां गर्भवा यजन्ति।

५ नवमीं पुनरपि भाष्डीरवनस्थां राममूर्त्तः अप्सरमी यजाना।

६ दशमी त्रीवनस्था प्रदासमूर्तिर माई। ने तिष्ठतीति सा कदाऽपि न प्रकटीभव-तीति तस्या उपासका स्रपि न सन्ति।

० एकादशमा एकादशी स्रोचननस्था स्वनिवद्दमूर्तिः सपदं द्वारकां स्रोतदीपं वागता।

न द्वादश्रमा द्रित द्वादशी छन्दावनस्था ख्यणमूर्त्ति भूम्यां प्रकटीमूय त्रीगोविन्द-गोपाल गोवर्द्ध नघरगोपीनाथायभिधाना भूम्यां तिष्ठति द्रित जीवगोखामिप्रकृति।ऽर्थः।

१ ता चि ये यजनित इति घ, चिक्रितपु सकपाठः। ता चिति क्षो मूर्णयः चुषदः प्रिविषदः प्रसिद्धा देवा यजनीति। चायवाताचीति दादग्रमूर्णीनामित्यादि, नारा-यण्याच्या।

गर्भजन्मजरामरणतापत्रयात्मकं दुःखं तरिन्त ॥ ३० ॥ तद्य्येते स्रोका भवन्ति । प्राप्य मथुरां पुरीं रम्यां(१) सदा ब्रह्मादिसेविताम् । प्रह्मान्कगदाप्रार्क्वरिचतां मुप्रखादिभिः ॥ ३८ ॥ यत्रासी संस्थितः क्रष्णस्तिभिः प्रक्त्या समान्तिः । रामानिक्द्वप्रयुक्तेक्विमण्या सन्तिते विभुः ॥ ३८ ॥ चतुःग्रव्दो भवेदेको स्थोद्धारः समुदाह्तः(१) ॥ ४० ॥

यजन्ति', 'ते,' 'मृत्युं' खिनदाकामकर्माख्यं, 'तरिन्त' ति हमुक्ता भवन्ति, इत्यर्थः । 'मृित्तं लभन्ते' । 'गर्भजन्मजरामरणतापत्रयात्मकं' खाध्या-त्मिकाधिदैनिकाधिभौतिकतापत्रयोत्यं, 'दुःखं तरिन्त', दुःखहेतूनाम निदादीनां निदत्ततादित्यर्थः ॥ ३७॥

उत्तेषे मन्त्रसमातिमाइ, तदपीति। 'तत्'तत्र मथुरायाः क्रम्यास्त्रय-ते ब्रह्मादिसेनितते च, 'स्ते स्त्रोकाः' मन्त्रा खिप, 'भवन्ति,' इत्यर्धः । प्राप्य मथुरां पुरीं रम्यामिति। तां 'मथुरां पुरीं प्राप्य', देवा मनुष्या गन्धवीदय क्तिस्रनीतिभेषः। कीदभीं, 'ग्रङ्खचक्रगदाग्रार्क्करिक्ततां,' तथा 'मुग्रसादिभिः' बसदेनादायुष्ठैः, उपस्तितां, इत्यर्थः ॥ ३८॥

यत्रासाविति। 'त्रिभिः' बन्नदेवादिभिः, 'श्राह्या' विकारणा, सिहतः 'क्षणाः', 'यत्र संस्थितः', तां पुरीं 'प्राप्य,'देवादयस्तिष्ठन्तीति सम्बन्धः। इदमेव विद्याति, रामानिवद्यपद्युम्नैरिति॥ ३८॥

तदेवं क्रमावतारोऽवतामां श्रेष्ठा मथुरा चास्य स्थानिम सुत्तं भवति। क्रथं वै अस्य ब्रह्मता भवतीत्यादेशत्तरं वत्तुं प्रमावर्थत्मा इ, चतुरिति।

१ प्राच तां मथुरां रम्यामिति ख,चिक्रितपुखकपाठः ।

२ चोक्कारस्यां शेः छत इति टीकासमातः पाठः।

तसाद्देवः परो रजसेति सोऽच्चित्यवधार्यात्मानं गोपा-चोऽच्चिति भावयेत् ॥ ४१ ॥

स मोचमश्रुते स ब्रह्मत्वमिधगक्किति(१)स ब्रह्मविद्ववि॥४२॥
यो गोपान् जीवान् वे स्रात्मत्वेनाद्दष्टिपर्यन्तमानाति स
गोपाने भवित स्रों तत् यत् सोचं परं ब्रह्म कृष्णत्मको
चलारः, ग्रव्दाः, रामानिकदादयो वाचकाः,यस्य 'चतुःग्रव्दः' चतुर्व्यू दः ।
'रकः' र्रस्यरः,'भवेत्' भवित । स्वत्र द्वेतुमाद्द, ह्वोद्वारस्थेति । 'द्वि'
यस्मात् कारसात्, 'खोद्वारस्थ', स्वकारोकारमकारार्द्वमान्वस्यैः 'संग्रेः,'
'क्वतः', रामप्रदुम्नानिकदक्षशामिधयो स्वत्तस्य रस्यर्थः ॥ ४०॥

यं च स्मृता मृता चसात् संसारादित्यस्थी त्तरमा इ,तसादिति। 'तसात्' प्रयावाभिधेयात्,'र जसः' कामकर्मात्मकात्, 'परः' इत्येवं विधी यः , 'देवः,' 'सीऽइमिति,''चवधार्व्यं' मनसा निष्यत्य, 'खात्मानं', 'गोपाषोऽइमिति भावयेत्'। र जसेति सिम्प्र्यान्दसः। खात्मख्रूपगोपाषात्मा इमित्यु-पासीतेति वाक्यार्थः ॥ ४१॥

विशिष्टोपाक्तेः पालानि दर्शयति । 'सः' उपासकः, 'मोच्चम्' चिवदाकामकर्मावियोगम्,'चक्रुते', 'सः,''ब्रह्मालं' सर्वष्टहत्लम्, 'चिध-गच्छति'। चत्र हेतुमाह, सब्रह्मविद्भवतीति, ॥ ४२॥

खुत्पत्तिपूर्वकं गोपालकलं दर्भयति। 'गोपान्' जीवान्,'खात्म-लेन,' 'खास्रष्टिपर्य्यन्तम्,' 'खालाति' खादत्ते खीकरोति। पदार्थमुक्ता

१ तस्त्रादेव परो रजने नम इति भोऽइसित्यवधार्य्य गोपालोऽइसिति भावयेत् स सोचमञ्जूते इति घ,चिक्रितपुस्तकपाठः।

नित्यानन्दैकरूपः(१) सोषमोन्तद् गोपाल रव परं सत्यमवाधितं सोऽष्टमित्यात्मानमादाय मनसैकं कुर्व्यात् ज्ञात्मानं गोपालो-ऽष्टमिति भावयेदिति स एवाव्यक्तोनन्तो नित्यो गोपालः॥४३॥ मथुरायां खितिक्रसान् सर्वदा मे भविष्यति। शङ्खन्वक्रगदापद्मवनमालावृतस्तवे॥ ४४॥

वाकार्यमास, स ग्रीपाली भवतीति। ग्रीपाललेन विशिष्टभावनामुक्ता कृष्णलेन तामास, को तत् यत् सीऽइमिति। कोन्सक्ट्राश्वां वार्च 'यत्', 'परं ब्रह्म,' 'सीऽइं,' इत्यवधार्य्यात्मानं इत्यनुवर्त्तनीयं, ततः 'कृष्णात्मको नित्यानन्दैकरूपः,' 'क्ष्म,' इति भावयेदितिश्रेषः। कृष्णात्मका इत्यस्थेव व्याख्यानं नित्यानन्दैकरूप इति। कृष सत्तायामिति धालर्थान्तश्रव्दस्य चानन्दार्थलात् ब्रह्मात्मेक्यभावनपूर्व्यकं ग्रीपालक्ष्यभावनामास्, कोन्तद्रीपाल एव परं सत्यमिति। कोन्तक्ष्यद्रवाचं 'परं सत्यमवाधितं,' 'ब्रह्म,' 'ग्रीपाल एव,' 'सः' ग्रीपालः, 'क्षह्म,' 'इति,' 'क्षात्मानं,' 'मनसा,' 'वादाय' ज्ञात्मा, 'ऐकां कुर्व्या त्'। तदेव विद्यापित, क्षात्मानं ग्रीपालीऽइमिति भावयेदिति। ग्रीपालात्मेक्यभावने हेतुमाइ। 'स एवाव्यक्तीनन्तः', तं भावयेदिर्घः। मायायामितव्यक्तिं वार्यित, क्षान्तः इति। देशतीऽनन्तत्वं मायानामपीत्यत काह नित्य इति। प्रवार्षहेतुतामाह, ग्रीपाल इति॥ ३३॥

को वास्पत्रावतारस्थात्रयो नित्यमित्याश्रङ्ख नारायको ब्रह्माकं प्रत्याङ्, मधुरायां स्थितिरिति । योद्दं 'श्रङ्खचकारिभिराद्यतः 'तुवे' प्रसिद्धं, तस्य 'मे सर्वदा मधुरायां स्थितिर्भविद्यति,' इत्यर्थः ॥ ४३ ॥

१ चों तत् यत् नत् सत् तत् परं त्रद्धात्मको नित्यानन्दै करूप इति घ,चिक्रितपुसक पाठः।

विश्वरूपं परं ज्योतिः(१)खरूपं रूपवर्जितम् ।

इदा मां संसारन्(१) ब्रह्मन् मत्पदं याति निश्चतं॥४५॥
मथुरामण्डले(१)यस्त जम्बूदीपे(४)स्थितोपि वा ।
योर्चयेत् प्रतिमां मां च(५) स मे प्रियतरो भृवि॥४६॥
तस्यामधिष्ठितः क्षष्णकृपी पूज्यस्वया सदा ।

विश्वरूपमिति। 'विश्वरूपं,' 'परं' उत्ज्ञयं नित्यं, 'ज्योतिः खरूपं' खप्रकार्या चैतन्यात्मकं, वस्तुतः 'रूपवर्जितं', 'मां', 'द्वरा संसारन्', पुरुष्ठः 'निस्तितं मत्रदं याति'॥ ४५॥

की हशी पूजास्थे यस्यो नरमा इ, मधुरेति। 'मधुरामखने यस्तु जस्तु-हीपे स्थितोपि वा','प्रतिमां' शिलादिमधीं,'मां च', ध्यानभावितं 'भुवि', सम्यक् 'खर्चयेत्', 'सः,' 'मे' मम, 'प्रियतरः' वस्तमः, भवति॥ ३६॥

तस्यामिति। हे ब्रह्मन् 'तस्यां'(र्) मथुरायां, 'चिधिकतः' चिधिकाय स्थितः, 'क्रब्यरूपी', चर्चं 'लया सदा पूज्यः'। चतुर्गू हेपूजनीपदेशम-मिप्रेत्य तत्र सम्प्रदायं दर्शयति,चतुर्दा चेति। पूज्यत्नेन चिधिकयन्त इति

१ चित्सक्षं परं च्योतिरिति ख,चिक्रितपुस्तकपाठः।

२ सदा मां संसारिति व,चिक्रितपुसकपाटः।

१ सधुरामण्डचे इति घ,चिक्कितपुखकपाठः।

४ जम्बूद्वीप इति तनापि भारतखार्के तनापि सप्तपुरीषु तनापि सधुरायां विशेष
 इति वेद्विसित नारायणः ।

श्रे योचेयेत् प्रतिमां प्रीत्या दति ख, चिक्कितपुखकपाठः।

र तस्यां प्रतिमायामिति नारायक्जीवगीसामिभ्यामुत्रां।

चतुर्दी चाखाधिकारभेदले न(१) यजन्त माम् ॥४०॥
युगानुवर्त्तानो खोका यजन्तीच समेधसः।
गोपाखं सानुजं रामक्किम्प्या सच तत्परं॥ ४८॥
गोपाखोचमजो निद्धः प्रद्युक्षोचं सनातनः।
रामोचं ज्यनिक्द्रोचमात्मानमर्चयेद् नुभः॥ ४८॥
मयोक्तोन खधर्मेण निष्कामेन(१) विभागमः।
'खधिकाराः' बस्य रूपावि, तेषां 'भेदलेन' भिद्यतेन, 'मां चतुर्दा
यजन्ति'॥ ४७॥

इरमेव विद्याति। 'युगानुवर्षिनः सुमेशसः जोकाः', 'इस्' जलूदीये, गौपाजदिकं मां 'यजनि'। चतुर्कं सं विद्योति, गौपाजमिति। चनु प्रजात जायेते तौ, जनुजौ प्रयुक्तानि दत्ती, ताथां सिहतं, 'सानुजं,' 'गौपाजं'। कीह्यं, 'रामविद्याख्या सम्,' वर्षमानं। तथा च गौपा-जसङ्ग्यं अप्रयुक्तानि वदात्मकचतुर्यू सः प्रक्रा सिहतं उद्यो भवति। पुनः कीह्यं, 'तत्परं' रामादिषु चनुरक्तं। यदा 'तत्परं' रकायं यथाखास्त्रा, यजनीति स्ववसः।। ४५।।

खयं चतुर्के इ रकी विद्यारेव नतु विद्याः एचित्रसाइ, गीपासी-इमिति। गीपासादयखलारोपि 'खई' विद्यारेव, ततः 'खात्मानं' विद्यां मां चतुर्विद्यं, 'बुधः' विदान्, 'खर्चयेत्', इत्यर्थः ॥ ८८॥

मयोक्तेनेति। 'मया'मन्यादिरूपिखा,विभागश्रो वर्षाश्रमादिभेद्रश्रीक्तेन

१ चिकारिभेदलेन इति च,व,चिक्रितपुचकद्वपाठः। चिकारिभेदलं यक्रनेऽधि-कारभेदखेनेति कीनगोसामी। चिकारिषं मिनगीति चिकारिभेदं इपं तक्काव-खेनति नारायणः।

२ निव्यामेन प्रशामिसन्मानरियतेन इति नारायकः।

तैरयं(१) पूजनीयो वे भद्रक्षण्यानिवासिभिः॥ ५०॥
तद्वर्मगितिचीना ये तस्यां मिय परायणाः।
कालिना यसिता ये वे तेषां तस्यामवस्थितिः॥ ५१॥
यथा त्वं सच पुनैस्तु यथा रहो गणैः सच।
यथा श्रियाभियुक्तोचं तथा भक्तो मम प्रियः॥ ५२॥

स दोवाचाख्योनिस्तुर्भिदेवैः कथमेको देवः स्यादेकम-'खर्घमेंग' वर्षात्रमधर्मेग,'भनकृष्ण'वनयोः 'निवासिमः,' 'तैः' प्रसिदैः वर्षात्रमधर्मेः, 'खर्य' चतुर्विधः कृष्णः, 'गूजनीयः,' इत्यर्थः ॥ ५०॥

स्वधर्मविद्योनानामिष मत्यरायवानामेव मत्युर्व्यामवस्थितिनै त्यभक्ता-नामित्याद्य, तद्यमंगतिद्योना इति। 'कांचना,' 'ग्रसिता:' ग्रस्ताः सन्तः, 'तद्यमंगतिद्योनाः'(^१)खात्रमाचाररद्यता खपि, 'ये', तस्यां, पुर्यां, मत्यरा भवन्ति, 'वै तेवां', स्व 'तस्यां' पुर्यां, 'खबस्थितिः', नान्येषा-मित्यर्थः ॥ ५१ ॥

खन हेतुमाइ, यथेति। 'यथा','पुनैः' सनकादिभिः, 'सइ लं,' 'यथा', च 'ग्रेंगै: सइ,' 'कइ:', 'यथा,' च 'श्रिया,' 'खभियुक्तः' सहितः, 'खहं', मम प्रियः, 'तथा', 'भक्ती मम प्रियः', खतक्तन पुरि भक्तानामेवाव- खितिरिति भेषः ॥ ५२॥

'सः' रसवीधितः, 'इ' प्रसिदः, 'खडायोनिः,' 'उवाच'। किं। 'चतुर्भिदेवै:' गोपासरामादिभिः, 'कथमेको देवः खात्', खनेकेबामेकलं

१ तैरहमिति च, चिक्रितपुसकपाठः।

२ तहमें ति भगवहम्में रूपा या गतिसाया हीनाः य किन्तु मिय परायकाः समात्रितवनः किन्ता प्रिताः पापास्त्राः तेषामिय तस्यां मयुरायां मयुरामण्डलेऽविस्यितिर्वे स्रोऽधि-कार इति मयुरायाः कपालुलेन सर्वे तीर्थतः श्रेष्ठामुक्तमिति जीवगोसामी ।

चरं यिद्रश्रुतमनेकाचरं कथं भ्रतं स द्वीवाच तं दि वे पूर्वं दि एकमेवादितीयं ब्रह्मासीत् तस्मादव्यक्तमव्यक्तमेवाचरं तस्मा-दचरात् मद्यक्तं मद्यते(१) वे दक्षारस्तस्मादेवाद्यद्वारात् पञ्चतन्मात्राणि तेभ्यो भ्रतानि तैरावृतमचरं भवति श्रचरोद्य-

बाइतमित्यर्थः। 'रकमच्चरं,' 'यत्' प्रवावाखं,'विश्रुतं', तर्हि 'क्यं', गोपाचरामाद्यनेकाच्चरं' 'भूतं' जातं। संदेति। यवं प्रसः 'इ' प्रसिदः, विष्युः 'तं हि वै', 'उवाच'। रकस्यानेकात्मकत्वमुपपादयितुं तस्य जग-न्मू लक्षारवालं वक्तुमा इ. पूर्वं हि एक मेवा दितीय मिलादि। 'पूर्वं' स्टे: प्राक्, 'एवं' सजातीयभेदरिहतम्, 'एव'ग्रब्दात् खगतभेदरिहतम्,'खिद-तीयं' विजातीयभेदर दितम्, 'ब्रह्म,''खासीत्'। 'तस्मात्' ब्रह्मणः, 'खयतं' सर्वकार्यकार गामितः, चयत्तम् वासीत्। चयत्तमेवेति। यत् चयत्तं, 'तत् 'अच्चरं',ब्रस्स'यव,'तच्चितिरूपलात्। 'तस्मादच्चरान्मइत्तत्त्वं'। 'मइतो वै इङ्कारः'। अइङ्कारवर्षकोपश्कान्दसः। 'तस्रादेवाचङ्कारात्,' 'पञ्चतन्मा-त्राणि भृतसूच्यापरपर्यायाः, 'तेम्यः','भूतानि' पश्चमश्चाभृतानि, इत्यर्थः। 'तै:' महदादिमि: कार्व्यभूतैः, 'खादतम्' वाप्तं, तेराद्यतमिति। 'अक्तरं,' चेति घटशरावादिभिरिव मृत्। अक्तरोद्दमिति। खवाक्तताच्चरात्मको विष्णुः 'चोङ्कारः,'च 'चच्चम्'। चोङ्काराच्चरब्रह्मण-येक्वीपपादनाय चोङ्कारे ब्रह्मधर्मानाङ, अजर इति। 'अजरोऽमरः' जरामरणपूनाः,'अभयः'चविद्याकामकर्माणूनाः,'अमृतः' चानन्दाताकः, चोङ्गार इति प्रोयः। तथाविधवस्मप्रतीकलात् स्रथ स्रस्यरधर्माना इ., ब्रस्ति। 'चच्चरः' चवाष्टताखः, 'चभयं दि वे ब्रस्न,' ब्रस्मणितसमुदाय-

१ तस्मादचरात् सद्दान् सद्दत्ते वै इति ख, घ, चिक्रितपुस्तकद्दयाटः ।

मोद्वारोचमजरोऽमरोऽभयोऽस्तो ब्रह्माभयं चि वै स मुक्ती-चमिस अचरोचमिस सत्तामानं(')विश्वरूपं(') प्रकाशं व्यापकं तथा एकमेवादितीयं ब्रह्म मायया तु चतुष्टयम् ॥ ५३॥ रोचिणीतनयो रामो अकाराचरसम्मवः। तेजसात्मकः प्रद्युक्त उकाराचरसम्भवः॥ ५४॥ प्राचात्मकोऽनिक्द्वो वै मकाराचरसम्भवः।

रूपलात्। यथ वस्यधर्मानाः मृत्तोद्दमिति। 'यदं', 'मृतः' यविदा-स्पर्भरिहतः, 'यिता', 'यदारोद्दम्' यविनाशो खद्दम्, 'यिता,' इत्यर्थः। बोङ्गारः, वस्ना, तत्पतीकलात् तथाद्यरमञ्चालतं वसा, तक्कि रूपलादिति विविद्यतार्थः। मन्येनं वस्त्रेष्त् कथं चतुष्टयं सम्पद्गमित्याशङ्का मन्त्रमाद्द, 'सत्तामानं विश्वरूपं प्रकाशं ञापकं तथा एकमेवादितीयं वसा मायया तु चतुष्टयम्,' इति स्पष्टं॥ ५३॥

मायया चतुष्ठयतं विद्याति, रोहिश्वीतनय इति। खनाराच्च रावच्चित्रया मायया सम्भवः चाविभावा यस्य सः 'चनाराच्चरसम्भवः,' 'रोहिश्वीतनयः', 'रामः' विश्वात्मको जाग्रदवस्थाधिष्ठात्समस्टिष्टप-इत्योषः। तेजसात्मक इति। उकाराच्चराविष्णत्रया मायया प्रादुर्भूतः, 'प्रयुक्तः', 'तेजसात्मकः' खन्नावस्थाधिष्ठात्समस्टिष्ट्य इत्यर्षः॥ ५०॥ प्राचात्मक इति। मकाराविष्णत्रया मायया प्रादुर्भूतः,'चनिष्दः,'

'प्राचात्मकः' सुष्टुत्यवस्थाधिस्रात्समित्रिरूप इत्यर्थः । श्रीकृष्यम् चवस्था-

१ स मुक्तोदमिस अचरोदमिस अजोदमिस अचरोभयं दि ससमामाविमिति स, चिक्रितपुस्तकपाठः।

१ चित्सक्षं प्रकाशमिति ख, घ, चिक्कितपुसकद्वयपाठः।

ऋदमात्रात्मको क्रष्णो यसिन् विश्वं प्रतिष्ठितम् ॥ ५५॥ क्रष्णात्मका जगत्कत्री मूलप्रकृतो क्किणी। व्रजस्तीजनसम्भूतश्रुतिभ्यो ब्रह्मसङ्गतः॥ ५६॥ प्रणवत्वेन प्रकृतिं वदन्ति ब्रह्मवादिनः। तसादोद्वारसम्भूतो गोपानो विश्वसम्भवः॥ ५०॥ क्रीमोद्वारसम्भूतो गोपानो विश्वसम्भवः॥ ५०॥ क्रीमोद्वारस्थैकात्वं पद्यते ब्रह्मवादिभिः।

नयातीतं तुरीयं धामेत्याकः, कार्डमानात्मकः इति । 'कार्डमाना' विशेषितः क्रितेनु वार्याः, "कार्डमाना स्थिता निव्या यानुवार्याः निशेषतः" इति-स्मृतेः । तदात्माकः' तत्मकाश्यकः, 'क्रियाः,' 'यस्मिन्' सदानन्दात्मके क्रियो, 'निन्नं,' 'प्रतिस्तितं' कथ्यक्तम् ॥ ५ ॥

विन्दुप्रतिपादा विकासी मूजपृक्कतिरूपेत्या , क्रव्यात्मिकेति। ज्ञव्यक्यां स्तिप्रक्तिमती स्वाभेदात् क्रव्याखरूपा , ज्ञातकर्त्री, 'मूजप्रक्रतिः,' च्यातक्या, इति प्रेषः। कीटग्री विकासीत्या स्, व्रजस्ती-जनसमूतेति। 'व्रजस्त्री जने', 'सम्भूताः' प्रसिद्धाः, याः 'श्रुतयः, तास्यः, प्रसिद्धः यो 'व्रस्नसङ्कः,' तस्रात् हेतोः ॥ ५६॥

'प्रवास' प्रक्रायक्तितं व्यवस्वादिगुवारीपहेतुतं, तेन हेतुना 'न्नव्यवादिनः,' यदा विश्वतेष्ठसादिरुपेव चतुर्दा संस्थितम् इत्यर्थः। तस्याः 'प्रकृति'सं 'वदिन्त'। 'तस्मात्'नव्यस्वरूपतात्,'बीक्वारेव 'सम्भूतः' प्रकृतिपृतिपादात्वात् पादुर्भूतः,'ग्रीपाकः,''विश्वसंस्थित इत्यर्थः ॥५७॥ स्थानोक्वारस्थेन्यत्विति। 'स्थानोक्वारयोः'रोक्यत्वं', नव्यवादिनः वदिन्त। व्यतः तत् 'प्रव्यते', वीजादाः समन्त इत्यर्थः। उत्तग्रीपाक्यजनं मथु-रायामित्ययेन भटिति मोच्यप्तवदिमत्याह, मथुरायामिति। 'मथरायां मशुरायां विशेषेष मां ध्यायन् मो समग्रुते ॥ ५८॥ श्रष्टपत्रं विकसितं इत्यद्मं तत्र संस्थितम्। दिव्यध्वजातपत्रेस्त(१) चिक्रितं चरणदयं ॥ ५८॥ श्रीवत्मचाञ्कनं इत्स्थं कौस्तुभं प्रभया युतम्। चतुर्भुजं श्रह्मचक्रशार्ज्ञपद्मगदान्वितम्॥ ६०॥ स्वतेयूरान्वितं वाद्यं कण्डं मालास्त्रशोभितम्। स्वतेयूरान्वितं वाद्यं कण्डं मालास्त्रशोभितम्। स्वतेयूरान्वितं वाद्यं कण्डं मालास्त्रशोभितम्। स्वतेयूरान्वितं वाद्यं वाद्यं भारत्वास्त्रश्राभितम्।

मां ध्वायन्,' विश्वाकारेण संस्थितः, किं पुनर्वस्थं, चतुर्दा संस्थितः, 'विश्वेषेण' श्रीघृम्, 'मीचं,' प्राप्नोतीत्यर्थः ॥ ५ प्

मां धायन् इत्यनेन सूचितं धानं विश्वदयित, खरुपत्रं विकसितं इत्यद्धं तत्र संस्थितं दिखध्वजातपत्रेकु चिन्हितं चरबदयमिति। 'खरु पत्रविकसित'हृदयकमच 'संस्थितं,' मां नित्यं धार्येदित्यसे, तेन सम्बन्धः। तत्रादी 'दिखध्वजातपत्रैः,' 'चिन्हितं,' 'चरबद्दं,' धार्यत्॥ प्रुट्या

'हरसं,' 'श्रीवत्सवात्रमं,' प्रभग युतं,'च 'कौकुभं,' धायेत्। 'वतु-भूं जं' चतुर्भिर्गृत्वितं भुजं, 'ग्रब्सचन्नगदाग्रार्क्नपद्मान्वितं,' धायेत्। ग्रार्क्नपद्मयोरेन्ननरे स्थितिरिति बौधम्। तेन नरचतुष्ठये पञ्चधारय-मुपपद्मम्॥ ६०॥

'बार्ड,' च 'सुकेयूरें।' चाङ्कदें:, 'चन्वितं,' धायेत्। बार्डमिखेक-वचननं जालाभिप्रायेख। तथा 'कार्ड,' 'माजासुक्रोभितं,' धायेत्।

१ श्राम्वजातपर्वेसु इति घ, चिक्रितपुस्रकपाटः।

२ युमत्किरीडमभयमिति घ, चिक्रितपुस्रकपाठः।

चिरएमयं सौम्यतनुं खभक्तायाभयप्रदम्।
ध्यायेन्त्रनिस मां नित्यं वेणुग्रहक्षधरं तु वा ॥ ६२ ॥
मध्यते तु जगत्ववं ब्रह्मज्ञानेन येन वा।
तत्वारभ्रतं यद्यस्यां मथुरा सा निगद्यते ॥ ६३ ॥
च्यष्टिक्पालिभिर्भृतिः पद्मं विकसितं जगत्।
संसारार्णवं सच्चातं(९) सेवितं मम मानसे ॥ ६४ ॥

तथा 'द्युमन्' दीप्तिमान्, 'किरीटः' मुक्कटः, तं, स्नारेत्। तथा 'स्फुरन्ती 'मक्तराकारे 'कुरहके,' तयौर्दर्यामत्यर्थः ॥ ६१॥

'चिरण्मयं'(^२)देदीप्यमानं विष्णं,तथा 'सौम्यतनं' प्रसन्नमधुराव्वतिं, 'खमताय' खमतेभ्यः, 'बमयप्रदं' मोचदम्, इत्यर्थः । खथवा दिभृत्रं धायिदित्याच, वेगुष्टङ्गधरं तु वेति ॥ ६२॥

खय मधुराग्रन्दार्थमाह । 'मध्यते,' 'सर्व',' 'जगत्,' खनेनेति मधं, ब्रह्मज्ञानं, गोपालखरूपम्, 'ब्रह्मज्ञानेन,' मदनगोपालखरूपेय वा इति ' सम्बन्धः । 'यत्' व्यधिष्ठानं, हि सम्यक् ज्ञानं जगद्भमं, निवर्त्तयति,'तत्सा-रभूतं,' 'यस्यां,' 'सा,' 'मधुरा'पुरीत्यर्थः ॥ ६३॥

हृदयस्थितं विकसितमस्यां पद्मं स्थानरीति, स्वस्टिक्पालिभि-रिति। 'स्वस्टिक्पालेरेव पत्रैः 'सेवितं,' 'पद्मं,' 'मम,' 'मानसे' सन्तः-करसे, 'विकसितं,' सत्, 'भूमिः', स्व 'जगत्' जगदात्रयं, 'संसारार्धवं,' 'सञ्चातं' उत्पन्नमित्यर्थः ॥ ६॥

१ संसारवारिसञ्जातमिति घ, चिक्रितपुखकपाठः।

२ चिर्षायं तप्तचाडकसन्निभमिति नारायकः।

चन्द्रस्यितिषो दिव्यध्वजा मेक्चिरएमयः(१) ग्रातपत्रं ब्रह्मलोकमधोध्धं चरणं सृतम् ॥ ६५॥ श्रीवताच्च सद्धपच्च वर्त्तते लाज्कनैः सच। श्रीवतालाज्कनं तसात्काय्यते ब्रह्मवादिभिः ॥ ६६॥

दिश्यक्षजातपत्रे सिक्षितं चरणदयं शाकरोति, चन्द्रसूर्ये विष इति। 'चन्द्रसूर्ये विषः', एव 'दिश्याः,' 'खजाः,'। मेरिदिति। 'मेरिः' पर्वतः, स एव 'चिर्ण्ययः' क्षत्रद्याः। द्यातपत्रमिति। 'ब्रह्मखोकः,' एव, 'खातपत्रं,' दखः शानीयमे क्षपि वर्त्तमान त्वात्। द्यायो ध्येमिति। ब्रह्मा- खस्य 'अधः,' 'ऊदं,' 'चरणं' चरणदयं, 'स्नृतम्,' इत्यर्थः। द्यायो ध्येमिति सिन्धः, चरणमिति स्नीवत्य कान्द्रसम्॥ ६५॥

श्रीवत्सनाष्ट्रनग्रन्दार्थमास् । 'ब्रह्मवादिभिः,' 'तस्मात्' हेती:, 'श्रीवत्सनाष्ट्रनं,'(^२)'कथ्यते',यस्मात् 'नाष्ट्रनेः,'सस्ति 'श्रीवत्सं' श्रीवस्तमं, 'सरूपम्,' एव परमेश्वरस्य 'वर्त्तते,' इत्यर्थः(^३) । सास्तितम् श्रीवत्सग्रस्य पूर्वनिपातः ॥ ६'६'॥

१ चन्द्रसर्थाम्बरीचित्रा धजमेवर्षिरक्षय इति व, चिक्रितपुस्तकपाटः। श्तस्य, ननु विन्धोः सर्वेश्वरस्य निकेतने सपताकेन धजेन भावमत चान्द्र, चन्द्रेति। धजमेवविरक्षय इति धजदण्यसानीयो विरक्षयो मेवः। कस्नादिदं निश्चितमत चान्द्र, चन्द्रसूर्याम्बरीचित्येति। चन्द्रसूर्यम्बच्चं यदम्बरं ग्राधवस्नं पताकास्त्रानीयं तस्य चौचित्या
जित्तस्य भाव चौचिती तथा ध्वजपटस्यानीयसूर्य्येन्द्रदर्शनाकोरोः सुवर्षधजदण्यता
चनुनीयते इति स्रेषः चयमर्थः नारायकप्रकीतः। चन्द्रसूर्यार्विषे दिव्या ध्वजा मेवविरक्षय इति च, चिक्रितपुस्तकपाटः।

२ त्रोवत्यसाञ्चनं ग्राक्तो वर्षः इत्स्यो स्गुचरणसार्धनिर्मित इति नारायणः। १ साञ्चनैदेखिणावर्षरीयभः कुष्डसीव्यतेर्स्वचविश्रेषेः सद वर्षते तसाद्वेतोः त्रीवत्यसचण इति जीवगोसामी।

येन सूर्याग्रिवाक्चन्द्रं तेजसा खखरूपिणा। वर्त्तते कौस्तुभाष्ट्यं चि मणिं(१) वदन्तीश्रमानिनः ॥६०॥ सत्त्वं रजसम इति श्रद्धारसतुर्भुजः। पश्चभ्रतास्मकं श्रद्धं करे रजसि संस्थितम्(१) ॥ ६८॥ बाजस्क्रपमत्यन्तं(१) मनस्रकं निगदाते।

त्राद्या माया भवेकाईं पद्मं विश्वं करे खितम् ॥ ६८ ॥

कौ सुभग्नव्यार्थमा इ. येन सूर्या घवागिति । कः, खर्कः, खः, वाक्, खौः, चन्द्राभी, इत्यस्य एकस्य एकदेशसास्यात् खकारस्तुवर्धसास्यात् वाक्, एतत्सवं स्ताभित परतन्त्रतया 'येन,' 'खस्वरूपिया,' 'ते जसा,' प्र'वर्त्तते,' तं चित्र्युरूपमेव 'ईशमानिनः' ईश्वराराधकाः, 'कौ सुभाखं,' 'मिंखं वदन्ति' ॥ ६७ ॥

चतुर्गुबितं भुजं विद्योति, सन्तं रजसम इति सङ्ग्रारचतु-भुज इति। गुज्ञप्यम् 'सङ्ग्रारः,'च इति 'चतुर्भुजः,' इत्यर्थः। गुज्ञक्रमेख सन्त्रसादौ निर्द्दिखेऽपि सायुधक्रममनुष्यादौ रजः करिसतं प्रक्सं विद्याति, पद्मभूतात्मकमिति। 'पद्मभूतात्मकं प्रक्सं,' रजोगुज्ञरूपे 'करे,''संस्थितं,' बुधा विदः। रजोगुज्ञजन्यक्रियोत्माद्यसादित्यर्थः ॥ १ प्रम

बाबस्यमिति। 'खत्यन्तं', यः 'बाबः,' तदिस्दं 'मनः', यव सत्त्वाख्ये करे स्थितं 'चक्नं निगद्यते',इति। 'खाद्या' जगन्मू चकार मं,'माया,' सा एव 'शाक्षें,' विश्वाख्यं 'पद्मं,' च तमी गुडब च बे 'करे', 'स्थितं,' 'निगद्यते,' तमी गुडायत्तस्थितिक लात्॥ १८॥

१ की सुभाव्यं मणिमिति च, घ, चिकितपु संबद्दयपाँठः।

र पश्चमूतात्मकः शक्षः परोरक्षि संस्थित इति व, चिकितपुसकपाढः।

२ चल्लंक्पमत्यममिति च, घ, चिक्रितपुसकद्यपाठः ।

त्राद्या विद्या गदा वेद्या सर्वदा में करे खिता। धर्मार्थकामकेयूरैदियैदियमचीरितैः(१)॥७०॥ कण्डन्तु निर्गुणं प्रोक्तं माल्यते त्राद्ययाऽजया। माला निगद्यते ब्रह्मंस्तव पुत्रेस्तु मानसैः॥ ७१॥ कूटखं सत्खद्धपच्च किरीटं प्रवदन्ति मां। चरोत्तमं प्रस्कुरन्तं(१) कुण्डलं युगलं स्कृतं॥ ७२॥

खादा विदेति। 'खात्' प्रसन्नात् विष्णीः, भक्तानां हृदि, संसार-निरम्मनायाविभविति प्रसिद्धा 'या' 'खाद्या विद्या' म्रसाहमस्मीति विद्या, सैव 'ग्रदा,''वेद्या', 'सर्व्यदा,' 'मे' मम, 'करे' खड़नाराखी, 'खिता', खड़ं द्यक्तिक्पतात्। केयू रैरिकातं वार्डं विद्यक्तोति, धर्मार्थं कामेति। पुरुषार्थं प्रयक्तविका 'केयू रैः,' खन्तितम् इत्यर्थः। कीट्ट भैः 'केयू रैः, 'दिखमस्नाम् 'हैरितैः' प्रवितितेः॥ ७०॥

कर्कमाचासुश्रीभितमिति व्याकरोति, कर्कन्विति। 'प्रीक्तं' प्रामुक्तं, 'कर्कं,''निर्मु कं' क्रम्म, जानीयात् इति भ्रेषः। तत् क्रम्म,'खाद्यया', 'खजया', मायया, 'मान्यते' प्रपद्याभरकेन भूष्यते, खतौ हेतोः 'तव','मानसैः पुजैः' सनकारिभः, 'तु,' खाद्या माया 'माचा निमदोते,' हत्यर्थः॥ ७१॥

शुमत्किरीटमिति व्याकरोति। वृधाः 'कूटस्थं सत्सरूपं,' 'मां,' 'किरीटं प्रवदन्ति,' सर्व्यंश्रेष्ठलादिति ग्रेषः। स्फुरव्यकरकुत्सल-मिति व्याकरोति, चरोत्तममिति। 'चरः' सर्व्यां स्मृतानि स्थिर-

[.] ९ दिवेंनित्यमवारितेरिति व, चिक्नितपुचकपाटः । नित्यं वर्षदा चवारितेः चप्र विचतेरिति नारायकः।

२ प्रवद् िन मे। अवरोत्तमं प्रस्कुरितमिति व, चिक्रितपुसकपाडः।

ध्यायेन्मम प्रियो नित्धं स मो समिधगक्कित । स मुक्तो भवित तसी त्रात्मानं ददामि(१) वै ॥ ७३ ॥ एतत्सव्यं भविष्यद् वै मया प्रोक्तं विधे तव । खरूपं दिविधन्त्रेव सगुणं निर्गुणात्मकम् ॥ ७४ ॥ स दोवाचान्नयोनिः व्यक्तानां मूर्त्तीनां प्रोक्तानां कथं त्वा-

जङ्गमानि, 'उत्तमः' जीवस्र, रतत् 'युगर्त्त' द्वयं, 'स्मृतं' प्रसिद्धं, 'कुख्यं', प्रवदन्ति इति सम्बन्धः ॥ ७२॥

कुष्डलान्तर्विशिष्टसरूपधानपत्तमाह, धायेदिति। यः कुष्ड-लान्तर्विशिष्टं मां 'धायेत्', 'स मोचमधिगक्ति'। मोचलु सर्व्यानर्थ-निटन्तिरूपः परमानन्दावाप्तिस्ति वाकरोति। स मृक्षो भवित तस्त्रे-आत्मानं दरामीति दितीयपादः कान्दसलात् सप्ताच्चरः। 'सः' उक्षो धाता, खिवदाकामकर्मभयो वि'मृक्षो भवित', खदं 'तस्त्रे,' 'खात्मानं' सदानन्दरूपं, 'ददामि,' इत्यर्थः॥ ७३॥

उत्तं थानमुपसंहरति, एतत्सर्वमिति(^२)। स्परं॥ ७८ ॥

स होवाचेति। प्रागुक्तमूत्तीनामाभरवायजनविधि जिज्ञासः 'सः' ह', 'खाडायोनिः', इति 'उवाच,' इत्यर्थः । यक्तानां मूत्तीनामिति । प्रागुक्त-दादग्रमूर्त्तिषु 'यक्तानां मूत्तीनां,' 'तु,' 'क्यम्,' 'वाभरवानि भवन्ति' ।

१ शारमानं च ददामीति घ, चिक्रितपुखकपाठः।

१ एतत् सब्बेसिति । दे विधे त्रज्ञान् एतत् भविष्यत् सथा तव प्रोक्तं दिविधसैव खरूपं सगुणं निर्गुण्य सकाम्यास्त्रते सेरोः प्रक्षे दत्यादिना, सगुणंसेकसेवादितीयं त्रज्ञासीदि-त्यादिना च निर्गुण्य खरूपं कथितसिति नारायणः । सगुणं विराट्खक्रपं निर्गुणं प्राक्तगणातीतसिति जीवगोस्वासी ।

भरणानि भवन्ति(१) कथं वा देवा यजन्ति रहा यजन्ति ब्रह्मा यजित ब्रह्मजा यजन्ति विनायका(१) यजन्ति दादशादित्या यजन्ति वसवो यजन्ति ज्यसरसो यजन्ति गन्धर्वा यजन्ति खपदानुगाऽन्तर्द्वाने तिष्ठतिका कां मनुष्या यजन्ति(१) ॥७५॥ स दोवाच तं हि वै नारायणो देव जाद्या ज्रव्यक्ता दादश-मूर्क्तयः सर्वेषु लोकेषु सर्वेषु देवेषु सर्वेषु मनुष्ठेषु तिष्ठन्ति ॥७६॥

'क्षं वा देवा यजन्ति रहा यजन्ति ब्रह्मा यजित ब्रह्मजा यजन्ति विनायका यजन्ति दादमादित्या यजन्ति वसवी यजन्ति स्र्म्यस्यो यजन्ति ग्रस्थ्वा यजन्ति,' इति स्पष्टं। 'क्षं' 'यजन्ति' कां च यजन्ति, इत्यर्थः। 'स्रपदानुगा,' च, का 'स्रन्तर्दोने,' च, 'का,' तिस्रति इति प्रश्नार्थः। कां मनुष्या इति। 'यजन्ति,' 'कां' मूर्त्तिं, 'मनुष्याः,' कृषं च इत्यर्थः॥ ३५॥

स द्वीवाचेति। 'सः' यव ब्रह्मणा एष्टः, 'नारायणः देवः,' 'तं' ब्रह्माणं, निस्तिम् उत्तरम् 'उवाच,' इत्यर्थः। अत्रायक्तमूत्तीं नां कथ-माभरणानि भवन्ति, इत्येकः प्रश्नः। कथं देवा यजन्ति, इतिहितीयः। कां मूर्त्तिं के यजन्ति, इति हतीयः प्रश्नो वाग्रव्दादिभिमतः। तत्र खाद्यपन्ने मूर्त्तीनामयक्ततान्नाभरणानि वक्तव्यानि, इत्युत्तरमिमेषेत्याद्द,

१ कयं वावधारणा भवति इति घ, चिक्रितपुस्तकपाठः। कयं वा केन प्रकारेण व्यवधारणा निस्तय इति नारायणः।

२ त्रज्ञाका यकानि सदती यकानि विनायका इति व, चिक्रितपु सकपाठः ।

२ खपदानुगाः नर्दाने तिष्ठति का कथं मनुष्या यजन्ति इति क, चिक्रितपुस्रकपाठः ।

स्त्रेषु रौही ब्रह्माप्येवं ब्राह्मी देवेषु देवो मानवेषु मानवी(१) विनायकेषु विद्वनाशिनी त्रादित्येषु ज्योतिर्गन्थर्वेषु गान्थर्वी त्रपरः खेवं गौर्वसुष्वेवं काम्या त्रन्तर्द्वाने प्रकाशिनी(१)॥७०॥ त्राविर्भावाऽतिरोभावा खपदे तिष्ठति तामसी राजसी

चादा चयक्ता दारममूर्त्तयः सर्वेषु जीनेषु सर्वेषु रेवेषु सर्वेषु मनुष्येषु किल्मीति। 'चादाः' चनादयः, इत्यर्थः। भ्रेषं सम्हम्॥ ७६॥

कां मूर्ति के यजन्त इति ढतीयप्रमुखीत्तरं सज्ज्ञाकी त्रंनेन वरकेन सर्वेष्ठ देवेष्ठ तिष्ठन्ति, इत्येतिहरुक्षेति, बहेषु रौही म्ह्याख्येवं म्राची देवेषु देवी मानवेषु मानवी विनायकेषु विघुनाधिनी खादित्येषु ज्योतिः ग्रन्थेषु ग्रान्थर्यी खप्यरः खेवं गौवं सुख्ये वं काम्या खन्तर्द्धाने प्रकाधिनी खाविभावातिरोभावा खपदे तिष्ठति तामसी राजसी सात्तिकीति । 'बहेषु', देवेषु, 'रौही' नाची मूर्त्तः, तिष्ठति, इति मुवता रौहीं मूर्त्तः बहाति, इति मुत्तिं बहा यजन्ति, इति दितीयप्रमुख उत्तरमुक्तं भवति । 'खवं', 'म्ह्याबं' मुत्तिं मृत्तिं मृत्तिं , तिष्ठति इत्यर्थः । खनापि म्ह्यीनाचीं मूर्त्तिं मृत्तिं मृत्तिं , तिष्ठति इत्यर्थः । खनापि म्ह्यीनाचीं मूर्त्तिं म्ह्या यजतीति दितीयप्रमुखीत्तरमुक्तं भवति । खनमन्यनापि चोद्द्यम् । खनार्द्धाने च का मूर्त्तिं स्वति होत्ययोत्तरभाष्ट्, खनार्द्धान इति । 'प्रकाधिनी' नाची मूर्त्तिः, 'खनार्द्धाने' तिरोधाने, तिष्ठित, प्रकाधिनी' नाची मूर्त्तिः, 'खनार्द्धाने' तिरोधाने, तिष्ठित, प्रकाधिनीं स्वति । धानस्वेष्ठतीत्यर्थः। तिरोधाने, तिष्ठित, प्रकाधिनीं स्वति । धानस्वेष्ठतीयर्थः। क्षेत्र । तिरोधाने, तिष्ठित, प्रकाधिने विष्ठति । भूर्तिः । भूर्तिः । भूर्तिः । स्वत्ति । स्वति । स्वति

१ मनुष्येषु मानुषी इति घ, चिक्रितपुसकपाठः।

२ चन्नद्दीने प्रकाशते दति व, चिक्रितपु खकपाठः।

१ चन्नक्षेत्रने या तिष्ठति चाऽप्रकाणिनी तस्या उपासकाभावात् सा चानिश्रीवरिकेन त्यर्थः इति जीवगीसामी।

सात्तिकी मानुषी विज्ञानघन त्रानन्दघनस्चिदानन्देकरसे भक्तियोगे तिष्ठति॥७८॥

त्रों प्राणाताने त्रों तत्तक्षूर्भुवः खस्तसी वे प्राणाताने नमो नमः॥ ७८॥

त्रीं त्रीकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवस्तभाय चो तत् सर्(९)भूर्भवः खस्तस्रे वै नमो नमः॥ ८०॥

त्रों त्रपानाताने त्रों तताङ्गर्भवः खतासे त्रपानाताने वे नमो नमः ॥ ८१ ॥

त्री कृष्णय रामाय प्रद्युम्नायानिरुद्वाय स्रो तत्सङ्गर्भुवः खस्तस्मै वै नमो नमः ॥ ८२ ॥

का सपदानुगा इत्यखोत्तरमाइ। चाविभावी विद्यते यसाः सा चाविभावा, न विद्यते तिरोभावो यसाः सा चितरोभावा, चावि-भावा चाकौ चितरोभावा च 'चाविभावातिरोभावा' रतन्नानी मूर्त्तिः, 'खपदे' कैसाससत्यसोनवेनुग्रस्तोनात्ये, 'तिस्रति', इत्यर्थः (१)। तस्यास्ते विध्यमाइ, तामसी राजसी सान्तिकीति। मानुषी कुत्र तिस्रति इत्यस्तोत्तरमाइ, मानुषी विद्यानयन चानन्द्यनसिषदानन्देकरसे भिति-योगे तिस्रतीति। 'विद्यानयनानन्द्यननान्नी 'मानुषी' मनुष्या प्रसिद्धा मूर्त्तः, 'सिष्टदानन्देकरसः' यः 'भित्तयोगः,' तत्र तिस्रतीत्यर्थः॥ ७८॥

९ गोपीजनवक्षभाय खाचेत्यनं चो तलदिति स, चिक्रितपुस्रकपाटः।

२ या खपदे वैक्कण्डादी तिष्ठति सा चाविभीवा चाविभीववती तिरोभावा तिरो भाववती चेति जीवमोसानी।

त्रों व्यानाताने त्रों तताद् धूर्भुवः खतासी व्यानाताने वे नमो नमः॥८३॥

त्रों श्रीकृष्णय रामाय ग्रें। तत्सद् भूर्भुवः खस्तस्रे वे नमो नमः ॥ ८४ ॥

त्रों उदानाताने त्रों तताद् धर्भुवः खतासी वै उदानाताने नमो नमः ॥ ८५ ॥

त्रों क्षणाय देवकीनन्दनाय त्रों तत्सद् भूर्भुवः खस्तसी वे नमो नमः॥ ८६॥

त्रों समानाताने त्रों तत्तर् धर्भवः खतासे वै(१) नमो नमः ॥ ८७॥

त्रों गोपालाय त्रनिरुद्वाय निजलहूपाय त्रों तत्तद् भ्रभुवः खतुसी वै नमो नमः॥ ८८॥

च्चें। योऽसी प्रधानात्मा गोपाल च्चें। तत्मद् सूर्भुवः खस्तसी वै नमो नमः(१) ॥ ८८ ॥

त्रों योऽसाविन्द्रियात्मा गोपाल त्रों तत्मद् सूर्भुवः खस्तसी वै नमो नमः(२) ॥ ८०॥

१ चों समानाताने चों तहादु भूभुंवः खसाची वे समानाताने नमी नम इति च, चिक्रितपसकपाटः।

२ तसी वै प्रधानाताने नमी नम इति ख, चिक्रितपुस्तकपाटः।

२ तसी वे दिन्द्रयारमने नमी नम दति स, चिक्रितप्सकपाठः।

चो योऽसी भूतात्मा गोपालः चो तत्मद्गूर्भवः खख्तसै वे नमो नमः(१) ॥ ८१ ॥

त्रों योऽसावुत्तमपुरुषो गोपानः त्रों तत्मङ्कर्भुनः खस्तस्य वै नमोनमः (१) ॥ ८२ ॥

त्रों योऽसी परब्रह्म गोपानः श्रों तत्मङ्ग भीवः खस्तसी वे नमो नमः (१) ॥ १३॥

त्रों योऽसी सर्वभूतात्मा गोपासः त्रों तत्मक्रूभुवः स्वस्तसी

त्रों योऽसी जायत्स्वप्तचुषित्रमतीत्य तुर्यातीतो गोपासः ् त्रों तत्मद्गूर्भुवः स्वस्तस्त्रे वै नमो नमः(॥) ॥ ८५ ॥

१ तसी वै भूताताने नमी नम इति च, चिकितपुचकपाठः।

र तथी जनमपुरवाताने मनी नम इति य, चिक्रितपुराकपाठः ।

तथी वै परज्ञालने नमो नम इति च, चिकितपुसकपाटः।

[।] तसी वे सर्वभूताताने नमी नम इति च, चिक्रितपुस्तकपाटः।

५ तसी वे तुर्धाकाने नसी नस इति च, चिक्रितपुसकपाटः। चो ठां प्राचाकाने डांतस्य दुभूर्भुवः स्वसासी प्राचाकाने नसी नसः।

चों डां छन्चाय गोविन्दाय गोपीजनवद्यभाय डां तसाद् भूभुवः ससासा वे नमी-ननः।

चो डामपानाताने डां तताद् भूभुं वः सससी चपानाताने नमे। नमः ।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा। नन्नेकस्य कथमनेकात्मलिमसामञ्जा तस्यैव तत्र प्रविद्यतादिसाइ,

एको देव इति। 'एकः', एव 'सर्वभूतंषु,''ग्रूहः' चनुप्रविष्टः, "तत् सद्दा

कों डां स्वकाय प्रमुखायानिषदाय डां तस्यद् भूर्भुं वः स ससी वे नमे। नमः ।
कों डां समानासने डां तस्यद् भूर्भुं वः स ससी पमानासन नमे। नमः ।
कों डां स्वकाय रामाय डां तस्यद् भूर्भुं वः स ससी वे नमे। नमः ।
कों डां स्वकाय रामाय डां तस्यद् भूर्भुं वः स ससी पदानासने नमे। नमः ।
कों डां स्वकाय देवतीनन्दनाय डां तस्यद् भूर्भुं वः स ससी वे नमे। नमः ।
कों डां बानासाने तस्यद् भूभुं वः स ससी व नमो नमः ।
कों डां बोत्रासान तस्यद् भूभुं वः स ससी व नमो नमः ।
डां कों वोर्षाविन्द्रयासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षाविन्द्रयासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षाविन्द्रयासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षाविन्द्रयासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षावृत्तमः पुरुवे। गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षो परत्रम् गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों योर्षो सम्भातासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों वोर्षो सम्भातासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों वोर्षो सम्भातासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।
डां कों वोर्षो सम्भातासा गोपासः डां तस्यद् भूर्भुं वः ससी वे नमे। नमः ।

द्दानीं सप्तद्रक्षाः पर्यायम्प्दैः प्राण्यः सुतिनुपदिम्नित स्रो ठानिति। ठकारसन्द्रनीजं तेनायदीर्घयुतेन क्रमेस सर्व्यं सम्युटा सन्ताः, ततः परं तस्यदिति ब्रह्मवासकम्बद्धः,
ततो मूरायाखिस्रो वास्तयः, ततस्यौपृटितमन्त्रोक्ताय नमा नमः सादराय दिविक्तः।
तस्यदादि सप्तद्मस्यपि तुस्यमेव। सन् क्रमः प्राण्यापानसमानोदानव्यानानां प्रयमहतीयपस्मसप्तमनवमा मन्ताः, रतेषु तस्यौपरते। वैम्रब्दो नास्ति। क्रव्यानेविन्दगोपीजनवक्तमानां सतुर्थनानां दितीयः। क्रव्यप्रयुक्तानिवदानां सतुर्थनानां सतुथः। क्रव्यरामयोस्तुर्थन्तयोः पष्टः। क्रव्यदेवकीनन्दनयोसादृष्ठयोरहमः। गोपासनिजस्यद्भपयोसादम्योर्द्भमो मन्तः। ततः सप्त मन्त्राः सप्तगोपासानां प्रयमानानां।
तत्र प्रेशानात्मा गोपास रकादमः। इन्द्रियाता गोपास्ते द्वद्धः। भतात्मा गोपास्त-

कर्माध्यक्तः सर्वभूताधिवासः साची चेता केवलो निर्गुणय ॥ ॥ ८६॥

स्याय नमः । स्रादित्याय नमः । विनायकाय नमः । स्याय नमः । स्याय नमः । द्रन्द्राय नमः । स्याय नमः । त्रे वानुपाविष्यत् द्रि हिष्ठतेः । प्रदीपादिवद्भान्तरादागत्य प्रवेशं वार्यत्, सर्वथापीति । स्राकाणादितुस्यतं वारयति, सर्वभूताधिवास इति । 'सर्वभूता'नाम् 'स्रिधवासः' स्रिधिषानं, स यव कर्णा स यव च उपादान-मिल्ल्यः । परिकामितयोपादानतं वारयति, कर्माध्यस्य इति । कर्मपत्रानामिल्ल्यः । विद्यापितयोपादानतं वारयति, सर्वभूति । 'सर्वभूता'नां स्रावकादीनामिष 'सन्तरात्मा,' इत्यर्थः । स्रविद्यातुस्थतं वारयति, साम्रीति । ईत्रव्यमाण्यीव कर्णाल्यसं वारयति, स्रविद्यात्रस्थतं वारयति, साम्रीति । ईत्रव्यमाण्यीव कर्णाल्यसं द्रात्मा तदा स्रावस्य विषयसम्बन्धे सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य प्रविद्याप्रसाह्मा स्रविद्यात्रस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य प्रविद्यास्तर्य चित्रयानामि स्रविद्यास्तर्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य सल्लेवीदयान्मोस्तरस्य स्रविद्यास्तर्य सल्लेवादिस्तर्योग्ने वित्यचित्रस्य मित्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्त्रविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तर्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तरस्य स्तर्वविद्यास्तरस्य स्तरस्य स्त

क्यं बड़ा यजनीत्वस्थीत्तरमाइ। 'वड़ाय' ईश्वराय, इति मन्त्रेब रकादश्चड़ा यजनीत्वर्थः। मानवाः क्यं यजनीत्वस्थीत्तरमाइ, स्वादित्याय नम इति। 'स्वादित्याय'विष्येव, 'नमः'। एवं सर्वेत्र नमी-

स्रायोदशः। जनसः पुरुषो गोपास्य सुर्दशः। परत्रश्च गोपासः पश्चदशः। सर्वभ्रतात्वा गोपासः षेड्शः। जाप्रतस्वप्रसुषुप्रिमनीत्य तुर्य्यानीता गोपासः सप्तदशः। सप्तानां डा मों योसाविति प्रथमः, डां तत्सद् भूभुं वः स्वस्ति वे नमो नमः इत्यन्तेन पडनीम्। इति नारायकः।

यमाय नमः। निर्म्हतये नमः। वरूणाय नमः। वायवे नमः(१)। कुवेराय नमः। द्रिशानाय नमः। ब्रह्माणे नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः॥ ८७॥

दत्त्वा स्तुतिं पुष्यतमां ब्रह्मणे खखक्षिणे । कत्तृत्वं सर्वभूतानामन्तद्गीने वभूव सः ॥ ८८॥ ब्रह्मणे ब्रह्मपु नेभ्ये।(१) नारदाय तथा श्रुतम्(१)।

नास्येव मन्तर्व वोध्यम्। क्यं दादशादिखा यजनीत्यस्यौत्तरमाद्यं, सूर्याय नम इति । सूर्वे सर्वप्रप्यमिति 'तूर्यः' क्योतिः स्कृषः ग्रमात्मा, इत्यर्थः खनेन मन्त्रे बादित्या यजनीत्वर्थः। क्यं देवा यजनीत्वर्थाः। त्रस्यां नमः। द्रस्यां नमः। द्रस्यां नमः। द्रस्यां नमः। व्यय्वां नमः। द्रस्यां नमः। सर्वेभा देवेभा नम इति। 'सर्वेभाः' वस्रगन्धवं स्थरः कित्ररप्रभृतिभाः, 'नमः,' इत्यर्थः। ४५॥

तदेवं ब्रह्मसंवादेन गान्धवीं प्रकात्तरं निरूपाण करहती मुनि-गान्धवीं प्रकारमवतारयति, दला कुर्तिमिति। 'सः'विक्यः, 'खखरूपिये' खमूर्त्त्र गे, 'ब्रह्मये', 'पुण्यतमां, 'प्रागुक्तां 'कुर्ति', (४) 'दला,' तथा सर्वेकीकानां 'कर्त्तृत्वं' कर्त्तृतामणं, 'ब्रह्मके,' दला, 'यन्तर्दाने वसूव' सहस्थे। वसूव॥ ४६॥

१ सदते नस इति ख, ग, घ, चिक्कितपुखकवयपाठः।

२ त्रचाची त्रचापुचेभ्य इति खीवगीसामियकातः पाठः।

२ गारदानु युनं वंचेनि घ, चिक्रितपुस्रकपाडः।

४ सुति सप्तर्शनकात्मिकामिति नारायकः। त्रुतिमिति कीक्गोंसामिसकातः पाटः।

तथा प्रोक्तन्तु गान्धविं गच्छध्वं(१) खाखयान्तिकम् ॥ ८८॥ इत्याथर्वणोपनिषत्तु गोपाखतापन्युत्तरभागः समाप्तः॥

मया वेदतत्समदायती यथा श्रुतं युद्यान् प्रति तथा प्रेक्तिमित्या इ, त्र स्वायं त्र स्वायं प्रेक्तिमित्या इति । हे 'ग्रान्धर्वि,'मया इदं 'त्र स्वयं पृत्रे स्थाः', 'नारदात् यथा श्रुतं,' 'तथा', मया युद्यान् प्रति 'प्रोक्तां।' हे 'ग्रान्धर्वि', सर्वे। यूयं 'खालया- नित्तं' खाश्रमप्रदेशं प्रति,'गच्छन्न' । खाद्यं त्रस्त्रों हित पदं, पूर्वस्त्रों के योजितं। नारदाय इत्यम पश्चन्याः स्वपांस् जुगिति सूत्रेण डादेशः। साद्यं तथा इति पदं, यथा, इत्येषे । ८८॥

भवसन्तापसन्तानप्रातनी तापनी श्रुतिः। तदर्थवीश्वनी टीका जनाईनविनिर्मिता ॥ १ ॥

र्हात श्रीमिदिश्वेश्वरविरचितायां गौपाचतापनीटीकायामुत्तरतापनी-टीका समाप्ता ॥

१ मञ्च लिमिति घ, चिकितपुचकपाठः।